चतुर्थ अध्याय :

निराला का काव्य - दृष्टि

चतुर्थ अध्याय :

निराला की काव्य दृष्टि

(क) काव्य का स्वरूप और उद्देश्य :

निराला जी के अनुसार, कविता ' कवि हृदय निर्गत उद्गार ' है, वह ' मानस की कुसुमित वाणी और ' कल्पना के कानन की रानी है । उसे मनुष्य जीवन की कमल कामिनी ' कहा गया है और वह जीवन की सरस साधना है ।[१] एक स्थल पर वे कविता को ' भव - अर्णव की तरणी '[२] मानते हैं । कविता हृदय निकेतन को स्वरमय करने का साधन है जिससे करुणा जागृत होती है ।[३] ' में और तुम ' में भी निराला ने ' तुम विमल हृदय उच्छ्वास और मैं कान्त-कामिनी-कविता ' कहकर कविता को विमल हृदय-उच्छ्वासों की सहज-निर्गतकान्त अभिव्यक्ति कहा है । उसी कविता में उन्होंने ' तुम मृदु मानस के भाव और मैं मनोरंजिनी भाषा ' जैसे उद्गार में कविता के सहज निर्गत भावोच्छलन की ओर ही इंगित किया है । इस प्रकार निराला जी के अनुसार कविता मानस के भावों के सहज उद्गार का नाम है । कविता को सहज-सम्भूत मानते हुए वे ' प्रिया ' शीर्षक कविता में कहते हैं:-

' तेरे सहज रूप से रंगकर
झरे गान के मेरे निर्झर
मेरे अखिल सर
स्वर से मेरे सिक्त हुआ संसार । ' (निराला ग्रन्थावली -२)

निराला की यह परिभाषा रीतिकालीन चमत्कार पूर्ण काव्य परिभाषा के विपरीत है । निराला की यह दृष्टि पाश्चात्य कवि वर्ड्सवर्थ की काव्य परिभाषा ' तीव्र अनुभूतियों के स्वत: प्रवाह ' के अनुरूप है । उनकी यह मान्यता पंत जी की काव्य-मान्यता

१- अनामिका : पृष्ठ ४२ ।
२ - अर्चना : गीत १ व २ ।
३ - आराधना : गीत - १ ।

' कविता विश्व का अन्तरतम् संगीत है ' से भी पूर्ण सामंजस्य रखती है । इस प्रकार उन्होंने अन्य छायावादी कवियों के समान एक अभिनव काव्य - परिभाषा की संयोजना में पूर्ण सहयोग किया है । अपने एक निबंध में उन्होंने कविता या काव्य को ' मनुष्य मन की श्रेष्ठ रचना '[१] कहा है । निराला की इन काव्य परिभाषाओं में वर्णित भावाकुल शब्दोच्छल जहां वर्ड्सवर्थ के निकट हैं वहीं ' कल्पना के कानन की रानी ' ब्लेक की मान्यताओं के । वर्ड्सवर्थ में जहां भावना और अनुभूति पर जोर है, वहां निराला में कविता, भव-अर्णव-की तरणी, मानस तरंग और उसकी कुसुमित वाणी है ।

कतिपय आलोचकों ने जैसे वर्ड्सवर्थ की परिभाषा में अतिव्याप्ति-दोष देखा है वैसे ही निराला में भी हम पा सकते हैं । परन्तु निराला जी के साथ एक बात है कि वे उसके साथ कुछ शर्तें रखे देते हैं । ' वर्ड्सवर्थ की परिभाषा की यह परिणति हो सकती है कि कवि का कोई भी भाव अभिव्यक्त होकर कविता हो जाय । निराला की मानस-तरंग की संभव है कोई सीमा न हो और कुसुमित वाणी के कितने ही प्रकोष हो सकते हैं । लेकिन जहां वर्ड्सवर्थ ने काव्य के उपयुक्त मूल्यवान और सार्थक भावों को ही काव्य से अभिहित किया, वहां निराला ने भी उनके द्वारा करुणा जागृत करने और ज्ञान प्रसारित करने, उच्चैर्यान और संवेदना-प्रेषण की शर्त लगा दी '[२] इस प्रकार निराला का दृष्टिकोण पाश्चात्य कवि वर्ड्सवर्थ से भी पूर्णरूपेण मेल नहीं खाता । वे ठीक-ठीक किसी आंग्ल या भारतीय कवि या समीक्षक से नहीं मिलते । सिद्धान्त में जहां उन्होंने ' कविता हृदय की सृष्टि है '[३] कहकर अपना मत व्यक्त किया है वहीं व्यवहारतः उनकी कविता बुद्धिवादी भी है । ' निराला का काव्य मूलतः बुद्धिवादी है ।

---

१ - चयन : पृष्ठ ४६ ।
२ - निराला काव्य : पुनर्मूल्यांकन श्र डा० धनंजय वर्मा, पृष्ठ ८६-६० ।
३ - निराला ग्रन्थावली : भाग १ : पृष्ठ ५०४ ।

बौद्धिक चिन्तन क्रमशः भावना के धरातल पर उतरता गया है और दार्शनिकता अंततः आध्यात्मिकता की भक्ति के दारुण दैन्य में पर्यवसित हो गयी है।[1] स्पष्ट है कि निराला काव्य की यह काव्य भूमि छायावादी काव्य परिभाषा से मेल खाती हुई भी उससे बंधी नहीं है।

कवि के संबंध में भी निराला जी ने अपने मत व्यक्त किए हैं। कवि जग का मुक्त प्राण है। ऊर्ध्व-ध्यान के सध्वनित गान का आलाप ही कवि कर्म है।[2] कवि अपनी मानस-तरंगों से ही सोचा करता है - जिसका लक्ष्य तिमिर को पार कर, अज्ञान को हटा कर सत्य का मिहिर द्वार देखना है। कवि अपने सुखों पर ध्यान नहीं देता। वह संसार के निर्मम प्रहार झेलता है और दूसरों के लिए जीवन की सृष्टि करता है :-

------ कवि तुम, एक तुम्हीं,
बार-बार, झेलते सहस्त्रों बार
निर्मम संसार के,
दूसरों के अर्थ ही लेते दान,
जीवन ही जीवन जोड़
मोड़ निज सुख से मुख। (कवि : निराला ग्रन्थावली-१, पृष्ठ ९६)

कवि विश्व के दैन्य से दीन होता है, उसे निखिल विश्व में स्वार्थ का अखण्ड साम्राज्य दृष्टिगोचर होता है, तब अत्यन्त संवेदनशील कवि की हृत्तंत्री झंकृत हो उठती है और वह विश्व की दुःख-मुक्ति की युक्ति सोचता है, जब नवजीवन की शक्ति का

१ - निराला : सं० पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश', प्रो० वीणा रानी कंठ का लेख, पृष्ठ २८।
२ - तुलसीदास : पृष्ठ ६० (११६)

संचार करता है :-

` विश्व के दैन्य से दीन जब होता हृदय
सदयता मिलती कहीं भी नहीं
स्वार्थ का तार ही दीखता संसार में,
मृत्यु की शृंखला ही,
संसृति का सुष्ठु रूप,
धीर पद- अवनतिही
चरम परिणाम यहां
कांप उठते तब प्राण
वायु से पत्र ज्यों
हे महान् । सोचते हो दुःख मुक्ति
शक्तिनव जीवन की । (निराला ग्रन्थावली-१, पृष्ठ ६६)

प्रकृति के खुले प्रांगण मे कवि - कर्म का उदय होता है ` कवि के लिए प्रकृति - प्रेस और संवेदना की आवश्यकता है । उसका कार्य जन - जीवन को शक्ति देना है । ` जिनके वचन - विन्यास में यह शक्ति होती है, जिनके शब्दों में मधुरता का यह स्वाद मिलता है, वे कवि कहे जाते है ।[१] कवि ही नश्वरता को अनश्वरता प्रदान करता है :-

` नश्वर को करते अविनश्वर तत्काल
तुम अपने ही अमृत के
पावन-कर-सिंचन से । ` (निराला ग्रन्थावली - १, पृष्ठ ६६)

` कवि ` नाम्नी कविता में कवि की जितनी विशेषतायें और प्रशस्तियां है वे ब्रह्म की है । भारतीय काव्य शास्त्र में कवि को ब्रह्म कहा गया है । यहां निराला जी की सहमति भारतीय काव्य शास्त्र से है । निराला जी ने कवि को संस्कृति का अग्रदूत

---

१ - निराला ग्रन्थावली - १, पृष्ठ ४४६ ।

और भावनाओं का गायक कहा है । उसमें एक उत्तेजना होती है जो मनुष्य में सद्भाव - जागरण करती है, उसके शब्द सोते हुओं को जगाते हैं । वह अपने भाव उसमें भरकर लोगों को जागृति की प्रेरणा देता है । वह जागरण के गीत गाता है और आनन्द के स्वर का गान ही उसका कर्तव्य है । भारतीय काव्यशास्त्र में काव्य को ब्रह्मानन्द - सहोदय कहा गया है और निराला जी भी यहीं मानते हैं । उन्होंने कवि को ब्रह्म ही सिद्ध किया है । ' पंतजी और पल्लव ' में यह बात कही गयी है । निराला जी ने कवि में प्राकृतिकता और सहजता के गुण देखते हैं :- ' कवि शब्दों को जोड़ते नहीं । उनके शब्द - हृदय के स्वाभाविक उद्गार होते हैं । आदि और अद्वितीय कवि बाल्मीकी की प्रथम कविता इसका प्रमाण है । कवियों में बनावट का लेश भी नहीं रहता । कृत्रिमता हो, तो वे अपने आसन से गिरा दिये जायं।'[१]

काव्य - प्रक्रिया :

कवि के स्वर के पीछे निराला जी ' प्रतिभा ' को महत्व देते हैं । ' समय का रूख जिस ओर होता है, जिस ओर चलने के लिए कवि की अन्तरात्मा उसे संकेत करती है, कवि को सफलता की आशा होती है, उसी ओर उसकी काव्य प्रतिभा विकसित होती है ।'[२] प्रतिभा के अतिरिक्त उन्होंने ' ईश कृपा ' का भी उल्लेख किया है । ' तुलसी-कृत रामायण का आदर्श '[३] शीर्षक लेख में उन्होंने शिव-कृपा की बात कही है :-

मानिति मोर शिव-कृपा विभाती । ससि समाज मिलि मनहु सुरावी '

इस प्रकार काव्य के मूल में उन्होंने ईश-कृपा या दैवी प्रेरणा को माना है । इसी के द्वारा

---

१ - निराला ग्रन्थावली - १, पृष्ठ ४४६ ।
२ - निराला ग्रन्थावली - १, पृष्ठ ४५० ।
३ - वही

कवि का हृदय उद्भासित हो उठता है। काव्य - प्रक्रिया के संबंध में जैसे निराला ने अपने उपर्युक्त मत व्यक्त किये हैं वैसे ही अन्य साहित्यों के रोमांटिक कवियों ने भी। इस संदर्भ में बड़े ही रोचक तत्व समक्ष आते हैं। शिलर लिखते हैं कि एक संगीतात्मक भाव सर्वप्रथम उनके हृदय में जागृत होता है, तत्पश्चात् काव्यात्मक भाव का उदय होता है। ` पाल वेलरी अपनी एक कविता के विषय में कहते हैं कि वह एक लय के रूप में लिखी गयी थी और इन्हें यह भी ज्ञात न था कि वह विषय-वस्तु कौन सी है जो काव्य-रूप ले रही है। शनैः शनैः शब्द तैरते हुए आए और कविता बनते गये।`[१] एक प्रसिद्ध आलोचक हरबर्ट रीड लिखते हैं ` मैं दृढ़ता के साथ कह सकता हूं कि समस्त काव्य जो मैंने रचा है और जिसे आज भी मैं सत्य और प्रमाणित मानता हूं - वह एक मूर्छा और अचेत अवस्था की परिस्थिति में उसी क्षण शीघ्रता से लिखा गया।`[२] ब्लेक का कथन है कि उनकी काव्य-प्रक्रिया उनके परलोकगत भाई के निर्देश में विकसित हुई। कीट्स ने महाकवि शेक्सपीयर की आत्मा से प्रेरणा ग्रहण की। रवीन्द्र ने भी अपनी काव्य प्रक्रिया को एक रहस्यमय जीवन देवता से अनुप्राणित माना है, यह बात उनकी ` जीवन देवता ` कविता से ज्ञात होती है। निराला जी भी, जैसा कि ऊपर कहा गया है, अपनी काव्य-प्रक्रिया के मूल में देवी-शक्ति मानते हैं। ` गीति का ` के एक गीत में वे लिखते हैं कि :

तुम्हीं गाती हो अपना गान
व्यर्थ मैं पाता हूं सम्मान।[३]

और

भावना रंग दी तुमने, प्राण
छन्द बन्धों में निज आवाहन।[४]

ठीक यही अभिव्यक्ति वे अनामिका में करते हैं :

मां

---

१ - निराला काव्य पुनर्मूल्यांकन : डा० धनंजय वर्मा, पृष्ठ ६०।
२ - Collected Essays in Literary criticism: Herbert Reed; Pg.110.
३,४ - गीतिका : पृष्ठ ४६ और ७६।

जिस तरह चाहो बजाओं इस वीणा को
यंत्र है,
सुनो तुम्हीं, अपनी सु मधुर तान
बिगड़ेगी वीणा तो सुधारोगी काव्य हो। (अनामिका)

जहां वे काव्य प्रक्रियामें प्रतिभा और देवी शक्ति की बात करते हैं, वहीं वे `साधना` को भी त्याज्य नही समझते। `निराला अभिनन्दन ग्रन्थ` में लिखा है कि जब वे कुछ लिखने बैठते हैं तब सरस्वती से उनका पूरा द्वन्द्व सा चलता है, तब कुछ लिख पाते हैं। इसका तात्पर्य यह नहीं कि निराला की दृष्टि में कविता के सहज-स्फुरण, सहज - प्रेरणा का कोई स्थान नहीं, अपितु हम कह सकते हैं कि वे काव्य में `साधना` का वही स्थान मानते हैं जो सहज-प्रेरणा का। निराला कविता को न तो श्रम-साध्य (पर्सपिरेशन) मानते हैं और न तो बाह्य प्रेरित। वे सहज-प्रेरणा (इन्सपिरेशन) को सर्वाधिक महत्व देते हैं। वे यह स्वीकार करते हैं कि सहज क्रिया तो कविता का स्वभाव ही है। `कवियों का हृदय स्वभावत: बड़ा कोमल होता है। वे दूसरों के साथ सहानुभूति करते-करते इतने कोमल हो जाते हैं कि किसी भी चित्र की छाया उनके हृदय में ज्यों की त्यों पड़ जाती है। उन्हें इसके लिए कोई विशेष प्रयत्न नहीं करना पड़ता है`[१] यही बात निम्नांकित कविता में ध्वनित है :

मैंने `मैं` शैली अपनाई,
देखा दुखी एक निजभाई;
दुख की छाया पड़ी हृदय में मेरे
झट उमड़ वेदना आई।` (निराला ग्रन्थावली - १, पृष्ठ १६)

इस प्रकार कवि की उत्तेजना आत्मा की वह ध्वनि है जो `स्व` में `पर` का प्रतिबिम्ब देखती है। कवि की उत्तेजित आत्मा की वह ध्वनि एक रस पैदा करती है

१ - रवीन्द्र कविता - कानन, पृष्ठ ५२।

जो कृतिकार की आत्मा के भावों की तरंगों को पाठक की आत्मा से मिला देता है। अनेक प्राणों में एक प्रकार की सहानुभूति, एक ही मधुर राग बज उठता है।[१] इस प्रकार काव्य प्रक्रिया में दैवी-प्रेरणा, संस्कार, प्रतिभा, एवं साधना का समन्वय निराला ने किया है जो छायावादी काव्यदृष्टि की सरणि में रहकर भी सम्पूर्णतः वही नहीं है। यहां भी निराला स्वच्छन्द और मुक्तिवादी ही दिखाई पड़ते हैं।

काव्य और व्यक्तित्व :

यह एक विवादास्पद प्रश्न है कि काव्य में कवि को अपने व्यक्तित्व को प्रकट करना चाहिए अथवा नहीं। आलोचकों का एक वर्ग काव्य में व्यक्तित्व के सन्निवेश का निषेध करता है और दूसरा उसे स्वीकृति देता है। टी०एस० इलियट के अनुसार, कविता व्यक्तित्व का प्रदर्शन नहीं, उससे पलायन है। इसके विपरीत निराला का कथन है कि " काव्य में यदि कोई कवि अपने व्यक्तित्व पर खास तौर से जोर देता है तो उसे उसका अकाव्य अहंकार न समझ मेरे विचार से उसकी विशाल व्याप्ति का साधन समझना निरुपद्रव होगा। कारण, अहंकार को घटाकर मिटा देना जिस तरह पूर्ण व्याप्ति है - जैसा भक्त कवियों ने किया - उसी तरह उसे बढ़ाकर भूमा में परिणत कर देना भी पूर्ण व्याप्ति है - जैसा ज्ञानियों ने किया है।"[२] अतः निराला के अनुसार दोनों की एक ही परिणति है, अंतर है तो केवल कुछ अंशों (डीग्रीज) का एक में लाघिमा है तो दूसरों में द्राघिमा। निराला काव्य में व्यक्तित्व की द्राघिमा की बात करते हैं :-

देखता है स्पष्ट तब
उसके अहंकार में समाया है जीव-जग
होता है निश्चित ज्ञान
व्याप्ति तो समष्टि से अभिन्न है। (पंचवटी-प्रसंग)

---

१ - चयन : पृष्ठ ५४।
२ - चयन : पृष्ठ ५०।

इसीलिए तो छायावादी कविताओं को व्यक्तित्व का विस्फोट माना गया । निराला ने स्पष्ट कहा है - ' मैंने ' में शैली अपनाई ' जागरण ' कविता में भी ये ही भाव व्यक्त हुए हैं । इस प्रकार यहां वे छायावाद की आत्मपरकता से पूर्ण सहमत हैं । निराला जी छायावादी आत्मपरकता या वैयक्तिकता के प्रमुख प्रवक्ता हैं ।

काव्य के उपादान :

छायावादी काव्य के उपादानों के विश्लेषण में हम देखा आए हैं कि निराला ने काव्य के उपादानों में भावों का सर्वोच्च कोटि की विशिष्टता प्रदान की है । भावों या अनुभूतियों के बाद उन्होंने ' कल्पना ' और सौन्दर्य ' को भी काव्य का आवश्यक उपादान माना है । वर्ड्सवर्थ की भांति निराला भी यह मानते हैं कि कविता में भावों की स्मृति द्वारा पुनर्संचय होता है । यही स्मृति मूर्ति विधायक - प्रमुख तत्व है जिसके अभाव में काव्य - प्रणयन हो ही नहीं सकता । अपनी ' स्मृति ' कविता में लिखते हैं :

सफल जीवन के सब असफल
कहीं की जीत कहीं की हार,
जगा देता मधुगीत सकल
तुम्हारा ही निर्मम फटकार ।

स्मृति अतीत के गान सुनाकर ध्यान हर लेती है, कवि स्पन्दित हो उठता है और काव्य-रचना सम्भव होती है । ठीक ऐसे ही शैली कहता है :-

"We look before and after
And pine for what is naught
Our sincerest laughter
With some pain is fraught
Our sweetest songs are those that tell'st us of saddest thought." 1

1. Skylark : Shelley : Golden Treasury; pg. 252.

यहां ` लुक विफोर एण्ड एफ्टर ` इसी स्मृति जिसे वर्ड्सवर्थ ` रीक्लेक्टेड इन ट्रेंड क्विलिटी ` कहता है, की ओर संकेत करता है । अतः जहां तक निराला जी काव्य में अनुभूति तत्व को प्रधान मानते हैं वहां तक छायावादी कवियों के साथ हैं और जब स्मृति द्वारा कविता - प्रणयन की बात करते हैं तो पाश्चात्य रोमांटिक कवि वर्ड्सवर्थ और शेली से साम्य रखते दिखाई पड़ते हैं । इस प्रकार वे छायावादी और रोमांटिक दोनो प्रकार के कवियों का समन्वय कर लेते हैं ।

निराला भावों की तीव्रता को भी स्वीकार करते हैं -

` भाव जो छलके पदों पर
हो न हलके, हो न हलके । `

कविता में भावों की मौलिकता पर वे बल देते हैं । वे भाव - निर्वाह का भी आग्रह करते हैं । उनके अनुसार भावों की लड़ी नहीं टूटनी चाहिए ।[१] कविता में भावों की एक संगठित एकता आनी ही चाहिए ।[२] वे भाव = सौन्दर्य पर भी बल देते हैं । भावों के बाद वे कल्पना तत्व को लेते हैं । ` कल्पना की एक किरण नीरस मन पर पड़ी और कविता अंगड़ाई लेकर खड़ी हो जाती है ।`[३] ` महामनीषा जब किसी व्यक्ति विशेष के भीतर जागृत होती है तब उसके अनेक कारण जागरण के उपादन के रूप में उपस्थित करते हैं । उन्हीं से सीमा अछोर - असीम में स्थिति पाती है और एकट शक्ति अभ्रकट के वर्ण गंध से हवा के हिल्लोलों पर कांपते हुए कल्पना के कमल को चूमती ह है । `[४] उनके अनुसार, कल्पना ही अनेक प्राणों में एक ही प्रकार की सहानुभूति जागृत करती है । यह समस्त वस्तुओं में एकत्व स्थापित करने वाली शक्ति है । ससीम को असीम और अनेक को एक करने वाली कल्पना शक्ति ही है ।

---

१ - प्रबन्ध पद्म : पृष्ठ ८५ ।
२ - रवीन्द्र कविता कानन : पृष्ठ ८०, हि० प्र० पु० बनारस ।
३ - अणिमा : पृष्ठ २५ ।
४ - अणिमा : पृष्ठ २५ ।

निराला जी कल्पना को स्वयं सत्य ही मानते हैं। ` कल्पना कभी निर्मूल नहीं होती - उसमें भी सत्य की झलक रहती है, अथवा यों कहिए कि कल्पना स्वयं सत्य है - - - -(अतः) कल्पना कभी असत्य नहीं होती, एक कल्पना में चाहे दूसरी कल्पना भले ही भिड़ा दी जाय। `[१]

यद्यपि निराला जी कल्पना को स्वयं सत्य मानते हैं, फिर भी वे कल्पना को सत्य के बिलोम अर्थों में भी प्रयुक्त करते हैं :-

(क) बोलूं अल्प, न कहूं कल्पना
सत्य रहे, मिट जाय कल्पना। (अणिमा, पृष्ठ १२)

(ख) नहीं यह कल्पना, सत्य है मनुष्य का
मनुष्यत्व के लिए - - - - - - - - । (अणिमा, पृष्ठ ४६)

एक स्थल पर उन्होंने कल्पना को मन की निराधर उड़ान के अर्थ में प्रयुक्त किया है। ` सुकुल की बीबी ` कहानी में उन्होंने लिखा है - ` मैं कल्पना में पृथ्वी अन्तरिक्ष पार करने लगा। कल्पना की वैसी उड़ान आज तक न ही उड़ा। `[२] ` चयन ` में वे कहते हैं - ` कविता प्रिय मनुष्य कल्पना प्रिय हो जाता है। उससे काम नहीं होता। ललित कल्पना मनुष्य को कर्म के कठोर क्षेत्र पर उतरते भय दिखाती है।`[३] इस प्रकार हम कह सकते हैं कि यद्यपि निराला जी कल्पना को सत्य का विलोम मानते हैं फिर भी उसमें सत्य की झलक तो होती है है। कल्पना समग्ररूपेण थोथी नहीं हो सकती।

---

१ - रवीन्द्र कविता कानन : हि० प्र० पु० बनारस, पृष्ठ ८०-८१।
२ - छायावाद का सौन्दर्यशास्त्रीय अध्ययन : डा० कुमार विमल, पृष्ठ १२०।
३ - चयन : पृष्ठ २५।

निराला कल्पना को भावों के बाद का स्थान देते हैं। " एक ओर पंत जी कल्पना की महत्ता को स्वीकार करते आ रहे हैं और दूसरी ओर महादेवी जी अनुभूति की महत्ता को, तीसरी ओर प्रसाद और निराला मध्यममार्ग ग्रहण कर इन दोनों (अनुभूति और कल्पना) के प्रति एक समन्वयात्मक दृष्टिकोण ~~भावानुसारी है~~ [रखते हैं और इसी कारण ही उनकी अधिकांश कल्पनाएँ भावानुसारी हैं।] इनकी कल्पना और इनके भावों में एक अविरल सहचारिता है।"[1] कवि भावों इस सहचरी " कल्पना के कानन की रानी " से मृदु पद आने का आवाह्न करता है ताकि :-

" मार्ग मनोहर हो मेरे (कवि के) जीवन का
खुल जाये पथ रूंधा कंटकवन का
घुल जाये मल मेरे तनका, मन का। " (गीतिका)

निराला के अनुसार, कल्पना के मूल में अनुभूति तो काम करती ही है, बौद्धिक पक्ष भी कोई कम कारगार नहीं होता। भावना और अनुभूति के द्वारा कल्पना का संवर्द्धन, बुद्धि द्वारा उसका संश्लेषण और उपस्थापन होता है। इसीलिए वे कल्पना से कहते हैं कि :-

" देख, तुम्हारी मूर्ति मनोहर
रहे ताकते ज्ञानी। " (गीतिका)

वे कल्पना को साहित्य सृष्टि, भाव - सृष्टि और जीवन सृष्टि के लिए एक प्रमुख तत्व मानते हैं।[2]

निराला की कल्पना विषयक धारणा कालरिज की मान्यताओं से मिलता जुलता है। कालरिज कहता है कि " इसका (कल्पना का) काम समन्वय की स्थापना करना है-समन्वय, एकरूपता का विविधता के साथ, साधारण का विशेष

---

१ - छायावाद का सौन्दर्यशास्त्रीय अध्ययन : डा० कुमार विमल : पृष्ठ १२१।
२ - छायावाद और महादेवी : डा० नन्दकुमार राय : पृष्ठ ७८।

के साथ, विचार का मूर्ति के साथ ।'[१] निराला जी भी यही कहते हैं परन्तु दोनों में यह अन्तर है कि जहां कालरिज कल्पना को प्राथमिक और सहकारी (प्राइमरी और सेकेण्डरी) दो भागों में विभक्त करता है वहां निराला जी ऐसा नहीं करते । कल्पना के समन्वयकारी कार्य को कालरिज ने ' इजेम्लास्टिक इमेजिनेशन ' कहता है । वर्ड्सवर्थ की प्रशान्ति मनोदशा में पुनर्संचित भावों का, कालरिज की कल्पना द्वारा ही, कविता में मूर्ति विधान होता है । यही बात यानी प्रशान्त मनोदशा में भावों का पुनर्संचय (इमोशन रिकलेक्टेड इन ट्रेंक्विलिटी) निराला की ' स्मृति ' नाम्नी कविता में है । इस प्रकार निराला की कल्पना विषयक ये अवधारणाएं आंग्ल कवि वर्ड्सवर्थ और कालरिज के अधिक समीप है ।

काव्य के उद्देश्य के संबंध में, जैसा कि पूर्व निरूपित है, निराला जी ने ' लोकोत्तरानन्द ' का प्रतिपादन किया है । ' साहित्य लोक से - सीमा से - प्रान्त से - देश से - विश्व से उनंचा उठा हुआ है । इसीलिए वह लोकोत्तरानन्द दे सकता है । ' लोकोत्तर ' का अर्थ है ' लोक ' में जो कुछ देख पड़ता है, उससे और दूर तक पहुंचा हुआ । ऐसा साहित्य मनुष्यमात्र का साहित्य है, भावों से, केवल भाषा का एक देशगत आवरण उस पर रहता है ।'[२] इस प्रकार निराला जी ने काव्य या साहित्य का लक्ष्य लोकोत्तर आनन्द बतलाया है ।

उन्होंने काव्य का लक्ष्य सर्वकल्याण भी माना है । ' साहित्य के सामने मनुष्य मात्र के कल्याण का लक्ष्य है ।'[४] पुनावे कहते हैं कि :-

' जब कुछ खास आदमियों के कल्याण की बात सोची जायगी, तब कुछ खास आदमियों का अकल्याण भी साथ-साथ होगा ।'[४] अतः साहित्य वह है जो मनुष्य जाति का उत्थान करे ।[६] ' परिमल ' की एक प्रार्थना में वे कविता से नूतन-जीवन भरने तथा

---

१ - रोमांटिक साहित्यशास्त्र : देवराज उपाध्याय : पृष्ठ १३६ ।
२ - प्रबन्ध प्रतिमा : पृष्ठ २५६ ।
३ - प्रबन्ध प्रतिमा : पृष्ठ २५६ ।
४ - प्रबन्ध पद्म : पृष्ठ ११।
५ - प्रबन्ध प्रतिमा : पृष्ठ २६० ।

जग को ज्योतिर्मय करने की प्रार्थना करते हैं । अत: वे साहित्य या काव्य के मूल में लोक कल्याण भी मानते हैं । इस प्रकार जहां तक काव्य के लोकोत्तरानन्द की बात है वे भारतीय काव्यशास्त्र की याद दिलाते हैं ।

(ब) निराला की काव्यवस्तु दृष्टि :

छायावादी काव्यवस्तु के प्रसंग में हमें दिखा आए हैं कि निराला जी ने मुख्यत: प्रकृति - वास्तविक प्रकृति और मानव प्रकृति - एवं राष्ट्रीयता को काव्य की वस्तु माना है । परन्तु उनका काव्य वस्तु विषयक दृष्टिकोण अत्यन्त व्यापक था । वस्तुत: वे अन्य छायावादी कवियों की भांति कुछ ही विषयों की परिधि के भीतर साहित्य को सीमित नहीं करना चाहते । गांन्धी जी से बातचीत के सिलसिले में उन्होंने लिखा है कि :-

" मैंने भी वस्तु और विषय की स्वतंत्रता की तरफ ध्यान रखा है, एक साहित्यिक की तरह, एक कवि की तरह, एक दार्शनिक की तरह । मेरा उद्देश्य था और है, स्वतंत्रता बहुमुखी है और साहित्य का मतलब है - वह सबको साथ लिए रहे । इसी दृष्टि से दूसरे जाग्रत राष्ट्रों और साहित्य के नमूने देखते हुए, अपने गत और वर्तमान राजनीति और साहित्य को समझते हुए, देश के विभिन्न धर्मों, सम्प्रदायों, प्रांतीय भाषाओं, लोगों के आचार - विचारों के भीतरी रूप जानते हुए, बाहरी संसार से उनके सहयोग का रूप देखते हुए जो साहित्य का निर्माण करते हैं, वे साथ - साथ जाति और राष्ट्र का भी निर्माण करते हैं ।"[१] वस्तुत: निराला का वस्तु के क्षेत्र में स्वतंत्र प्रवृत्ति के हैं । अत: उनकी काव्य वस्तु संबंधी दृष्टि लोक विस्तृत है । " संसार में जितने विषय, जितनी वस्तुएं, मन और बुद्धि द्वारा ग्राह्य जो कुछ भी है - वह भला हो या बुरा - रचयिता की दृष्टि में बराबर महत्व रखता है । इसीलिए किसी बुरे दृश्य की वर्णन उतनी ही महत्वपूर्ण होगी जितनी अच्छे दृश्य की । रचयिता को दोनों की रचना में एक सी ही शक्ति लगानी पड़ती है ।"[२]

---

१ - प्रबन्ध प्रतिमा : पृष्ठ २६ ।

२ - प्रबन्ध प्रतिमा : पृष्ठ १२२ ।

यहां निराला जी का मत अन्य छायावादियों से भिन्न है। उन्होंने विषय की व्यापकता पर जोर दिया है। राजनीति भी साहित्य का एक अंग है। `साहित्य के व्यापक अंगों में राजनीति भी उसका एक अंग है। अस्व राजनीति की पुष्टि भी वह चाहता है।`[१] निराला जी साहित्य की स्वतंत्रता और उसकी चिर नवीनता के समर्थक हैं, इसीलिए वे कहते हैं कि यथार्थ साहित्य किसी भी इतर उद्देश्य की पुष्टि के लिए नहीं आता, वह स्वयं सृष्टि है। इसीलिए उसका फैलाव इतना है जो किसी सीमा में नहीं आता। ऐसे ही साहित्य से राष्ट्र का कल्याण हुआ है। इस प्रकार अपने युग में वे साहित्य की स्वतंत्रता के प्रबल समर्थक रहे हैं और इस ी कारण राजनीतिक नेताओं से उन्हें विरोध भी लेना पड़ा। यथार्थ साहित्य नेताओं के दिमाग के नपेन तुले विचारों की तरह प्रकोष्ठों में बन्द होकर नहीं मिलता। वे जानते हैं कि यदि साहित्य किसी राजनीतिक दल का मुखापेक्षी हो जायगा तो उसकी स्वतंत्रता और अन्विति का अन्त हो जायगा। इसलिए उन्होंने गान्धी के विरोध में रवीन्द्र की नीति में समर्थन व्यक्त किया क्योंकि वह साहित्यिक की नीति थी। `साहित्यकार दलबन्दी में आकर एक खास वस्तु विषय को सत्य नहीं कह सकता। उसका क्षेत्र जो व्यापक और विस्तृत होना चाहिए।`[२]

स्पष्ट है कि जहां छायावादी काव्य वस्तु में आन्तरिकता या अन्तर्मुखीनता गी का प्राधान्य है वहीं निराला काव्य में वहिर्मुखताका। उन्होंने काव्य वस्तु को एकांकी नहीं बनाना चाहा। `साहित्य में वहिर्जगत संबंधी इतनी बड़ी भावना भरनी चाहिए कि जिसके प्रसार में केवल मक्का और जरुसलम हो नहीं, अपितु सम्पूर्ण पृथ्वी आ जाय।`[३] यही कारण है कि निराला के काव्य में आभ्यन्तरजगत का ही नहीं अपितु वाह्य जगत के यावत् पदार्थों का चित्रण है। उनका उद्देश्य था - `काव्य में साहित्य के हृदय को

---

१ - प्रबन्ध पद्म : पृष्ठ १६० ।
२ - महाप्राण निराला : गंगा प्रसाद पाण्डेय : पृष्ठ १८८ ।
३ - प्रबन्ध पद्म : पृष्ठ १६१ ।

दिगन्त व्याप्त करने के लिए विराट् रूपों की प्रतिष्ठा करना अत्यन्त आवश्यक है।[१] हिन्दी काव्य में इसका अभाव पाकर वे कहते हैं :-

"पर अभी हमारे नवीन साहित्य को समयानुकूल परिमार्जित और विराट् भावनाएं मिलनी चाहिए। ----हिन्दी के नवीन पद्य-साहित्य में विराट् चित्रों के खींचने की तरफ कवियों का उतना ध्यान नहीं।"[२]

यदि निराला काव्य के व्यावहारिक पक्ष को लें तो वह उनकी इस सैद्धान्तिक दृष्टि की पूर्ण संगति में है। व्यक्तिगत संवेदना से लेकर पारिवारिक, सामाजिक, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं तक तथा लौकिक और शृंगारिक प्रश्नों से लेकर आध्यात्मिक प्रश्नों तक निराला काव्य की सीमा है। इतना व्यापक काव्य धरातल किसी छायावादी कवि का नहीं है। आचार्य शुक्ल का कथन है कि - निराला जी की रचना का क्षेत्र तो पहले से ही विस्तृत रहा। दूसरी ओर छायावादी कवियित्री महादेवी वर्मा का काव्य क्षेत्र सीमित है क्योंकि इनकी दीपकवाली साधना सर्वसाधारण की वस्तु नहीं है। उसे तो कोई असाधारण शक्ति - सम्पन्न व्यक्ति ही अपना सकता है। साधारण व्यक्ति तो दीपक से प्रकाश उत्पन्न करने के बदले स्वयं उसमें जलकर भस्म हो जायेगा। क्योंकि सबमें वह दमखम नहीं आ सकती कि वह दूसरों को प्रकाश देता रहे, स्वयं सतत् जलकर। इस प्रकार महादेवी का क्षेत्र सीमित है। यही बात पंत में भी है। प्रसाद की दृष्टि यदि व्यापक थी तो निराला से भिन्न अर्थों में।

व्यक्तिगत, पारिवारिक और सामाजिक भावना :

अनेक काव्य में व्यक्तिगत संवेदनाओं का आधार उनका स्वयं का दुर्भाग्य बना हुआ है। उनके जीवन की सबसे बड़ी दुर्घटना - प्रिया की मृत्यु थी। प्रिय -वियोग

---

१ - प्रबन्ध पद्म : पृष्ठ १६८।
२ - प्रबन्ध पद्म : पृष्ठ १६६।

कवि के मानस में टीस पैदा करता है :-

आज वह गयी मेरी, वह व्याकुल संगीत हिलोर
किस दिगन्त की ओर ?
यौवन बन - अभिसार-निशा का यह कैसा अवसान । (अनामिका)

प्रिया की पावन-स्मृति और उसके बताए मार्ग पर चलकर कवि अपने को आगे बढ़ाता है । प्रत्यक्ष साहचर्य के अभाव में उसकी स्मृति ही कवि का संबल होगी, कवि इसी आध्यात्मिक निष्कर्ष पर पहुंचता है :-

यौवन के वन की वह मेरी शकुन्तला
- - - - - - - - - - - - - -
चुम्बन से जीवन का प्याला भर दे गयी ।
रिक्त जब होगा, भर देगी तत्काल स्मृति
काल के बन्धन में जीवन यह जब तक है । (स्मृति - चुंबन परिमल)

अपने दुःखों के संबंध में कवि कहता है :-

'तुम्हें कैसे प्रिय बतलाऊं मैं ?'
कैसे दुःख गाथा गाऊं मैं ?'
- - - - - - - - - -
वैसे ही मैंने अपना सर्वस्व गंवाया,
रूप और यौवन - चिन्ता में, पर क्या पाया ? (विफल वासना : अपरा)

पुत्री सरोज की मृत्यु पर अर्थाभाव का यह चित्रण -

धन्ये मैं पिता निरर्थक था,
कुछ भी तेरे हित कर न सका । (सरोज स्मृति - अपरा)

` राम की शक्ति पूजा ` में वे कहते हैं कि :-

` धिक् जीवन जो पाता ही आया है विरोध
धिक् साधन जिसके लिए सदा ही किया शोध । `

सामाजिक जीवन के सफल में चित्रण में ` भिक्षुक ` और ` विधवा ` कविताएं विशेष स्मरणीय हैं ।

राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय भावनाएं :-

उनकी ` जागो फिर एक बार `, ` शिवाजी का पत्र `, ` वीणा वादिनी वर दे ` आदि में राष्ट्रीयता व्यक्त हुई है । अन्तर्राष्ट्रीय - सौहार्द्र व्यक्त करने के लिए उन्होंने सम्राट अष्टम एडवर्ड की प्रशस्ति लिखी है क्योंकि उनके आचरण में आत्मबल की दृढ़ता है :-

सिंहासन तज उतरे भू पर,
सम्राट ! दिखाया
सत्य कौन सा वह सुन्दर
- - - - - - - - - -
प्रतिजन, प्रतिजन
आलिंगित तुझ से हुई
सभ्यता यह नूतन (अनामिका)

इसी प्रकार उन्होंने पौराणिक, ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक वर्ण्य-विषयों को भी ग्रहण किया है । पौराणिक विषयों में ` राम की शक्ति पूजा ` एवं ` पंचवटी प्रसंग ` को ले सकते हैं । ऐतिहासिक के अन्तर्गत ` शिवाजी का पत्र ` आता है । सांस्कृतिक विषय में ` तुलसीदास ` नाम्नी कृति विशेष स्मरणीय है । ` यमुना के प्रति ` और ` सहस्राब्दि ` में उनकी ऐतिहासिकता व्यक्त हुई है ।

इन विषयों के अतिरिक्त निराला काव्य में प्रकृति और प्रणय, कल्पना और यथार्थ जगत, दर्शन और व्यंग्य सभी का सम्यक् समावेश है। जितनी विस्तृत दृष्टि विषय के क्षेत्र में निराला रखते हैं उतनी और कोई छायावादी कवि नहीं। अतः उनकी काव्य वस्तु में प्राकृतिकता का शाश्वत प्रवाह है। उनके अनुसार "साहित्य में अनेक दृष्टियों का एक साथ रहना आवश्यक है, नहीं तो दिग्भ्रम होने का डर है। इसीलिए मैंने तमाम भावों की एक साथ पूजा करने का समर्थन किया ---- हमें अपने साहित्य का उद्देश्य सार्वभौमिक करना है, संकीर्ण एकदेशीय नहीं।"[१] निराला की तरह अनेक रसों और भाव स्तरों की काव्य सृष्टि इस युग में किसी ने नहीं की है। प्रसाद के "कामायनी" महाकाव्य में वीर रस का चित्रण अत्यन्त विरल है। निराला में सभी रस हैं।"[२] निराला जी अपनी विषय वस्तु की व्यापकता की ओर लक्ष्य करते हुए लिखते हैं कि - "इस तरह साहित्य को जीवित रखने के लिए उसमें अनेक भाव अनेक चित्रों का रहना आवश्यक है और जबकि अपने अपने स्थान पर सभी भाव आनन्दप्रद हैं और जीवन पैदा करने वाले हैं। व्यापक साहित्य किसी खास सम्प्रदाय का चित्र नहीं।"[३]

इस प्रकार निराला में छायावादी अन्तर्मुखता कम है। "छायावादी कवियों में निराला की दृष्टि सर्वाधिक वस्तुन्मुखी और व्यापक है। कवि एक ओर जीवन मूल्यों का स्वागत करता हुआ कहता है "आखों में नवजीवन का तू अंजन लगा पुनीत बिखरकर झर जाने दे प्राचीन" तो दूसरी ओर स्वस्थ सांस्कृतिक परम्परा की याद दिलाते हुए उत्साह संवलित वाणी में बोल उठता है "योग्य जन जीता है, पश्चिम की उक्ति नहीं, गीता है।" कहीं वे नारी - सौन्दर्य का चित्र उरेहते हुए दीख पड़ते हैं तो कहीं पौरुष, ओज, बल-वीर्य को अभिव्यक्त करते हुए। कहीं वे दीन-दुखियों की प्रतारणा को उद्घाटित करते हैं तो कहीं क्रान्ति के गीत गाते हैं, कहीं सामाजिक विषमताओं पर प्रबल कशाघात करते हैं तो कहीं भगवान की करुणा के आकांक्षी दिखाई पड़ते हैं।[४]

---

१ - चयन: पृष्ठ ६८।
२ - महाकवि निराला - भाग १, जानकी वल्लभ शास्त्री, पृष्ठ ४६।
३ - चयन, पृष्ठ ६३।
४ - हिन्दी साहित्य : उदभव और विकास : डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी : पृष्ठ ३१२।

इस प्रकार उनकी दृष्टि वस्तुन्मुखी, विषय प्रधान और वहिर्मुखी है यद्यपि कि वे छायावादी अन्तर्मुखता को भी नहीं छोड़ सके हैं। अन्तर्मुखता और वहिर्मुखता दोनों का संतुलन उन्होंने कर दिया है। इसी प्रकार भाव, कल्पना और बुद्धि का भी संतुलन निराला जी ने किया है।[१] अतः निराला की काव्य वस्तु में एक संतुलन है।

कुल मिलाकर निराला छायावादी काव्य वस्तु को समेटते हुए भी उससे अलग दृष्टि रखते हैं। यही उनकी मौलिकता है जो अन्यों से पृथक कर देती है। यही उनकी विशिष्टता है। निराला की काव्य वस्तु में अनन्तता है। उनमें प्रसाद की तरह एक ही शिखर की ओर सजग उन्मुखता नहीं है, बल्कि एक आन्तरिक सहजता और आत्मसाक्षात्कार की प्रवृत्ति हर आरोह और हर ढलान पर अनेक ध्वनियों और छवियों से मुखरित होती रहती हैं। उनमें पंत की तरह अलग - अलग शुरुआतें और अलग - अलग अंत भी नहीं है, बल्कि एक ही साथ अनेक शुरुआतें हैं। जो जीवन के साथ - जहां है वहीं रुक जाती हैं, उनका कोई स्वाभाविक और सजग अन्त कहीं नहीं दीखता बल्कि उनकी एक अनन्त प्रक्रिया दिखाई पड़ती है।[२]

(ग) निराला की शिल्प दृष्टि :

(१) भाषा :-

निराला का आविर्भाव युग में हुआ था जब काव्य भाषा के पद पर ब्रजभाषा प्रतिष्ठित थी। निराला जी ने ब्रजभाषा न अपना कर खड़ी बोली का वरण किया

---

१ - महाप्राण निराला : गंगा प्रसाद पाण्डेय : पृष्ठ १८७।
२ - निराला : आत्म हन्ता आस्था : डा० दूधनाथ सिंह : पृष्ठ २८-२९।

और उसे स्टेण्डर्ड माना । ब्रजभाषा की स्वीकृति करते हुए वे लिखते हैं कि -
" फिर खड़ी बोली केवल बोली में ही नहीं खड़ी हुई कुछ भाव भी उसने ब्रजभाषा संस्कृति से भिन्न अपने कहकर खड़े किये हैं यद्यपि वे वैहिविंश्व की भावना से संश्लिष्ट हैं ---- मैंने अपनी शब्दावली को काव्य के स्वर से मुखर करने की कोशिश की है।"[१] इस प्रकार निराला ने काव्य के क्षेत्र में खड़ी बोली की प्रतिष्ठा करके एक महान कार्य किया । उनकी दृष्टि में काव्य - भाषा का विशेष स्थान है । इस क्षेत्र में शब्द ब्रह्म की जितनी साधना निराला ने की उतनी अन्य किसी कवि ने नहीं । रवि, मार्तण्ड, सूर्य आदि शब्द यद्यपि हैं समानार्थी परन्तु इनके भीतर से निसृत हुई इनकी आत्मा का स्वर अपना है जो अर्थ -व्यंजना में असीम सहयोग करता है । निराला शब्दों के इस स्वर और तन्जन्य अर्थ -व्यंजना के प्रति अत्यन्त सजग रहे हैं और वे इस क्षेत्र में अप्रतिम हैं । काव्य में विशेष भावों की अभिव्यक्ति के लिए उनको सहस्त्रों शब्द गढ़ने पड़े जो संगीत, ताल एवं लय के साथ खड़ी बोली में खप सके । इस शब्द: शिल्पी और पारखी ने अनायास ही अपने काव्य में भाषा के महत्व को प्रतिपादित करने वाली भावमय पंक्तियां यत्र-तत्र कह डाली है :-

(१) सहज भाषा में
समझती थी उनके तत्व - (जागरण कविता)

(२) भाषा में तुम पिरो रही हो बन्द तोल कर (तरंगों के प्रति)

(३) तुम मृदु मानस के भाव
और मैं मनोरंजिनी भाषा (मैं और तुम)

अपनी गद्य - रचनाओं में भी उन्होंने अपने भाषा - विषयक उद्गारों को व्यक्त किया है । उनके अनुसार बड़े - बड़े साहित्यिकों ने प्रकृति की अनुकूल ही भाषा लिखी है।

---

१ - गीतिका की भूमिका : निराला , पृष्ठ

कठिन भावों को व्यक्त करने में प्राय: भाषा भी कठिन हो गयी है । जो मनुष्य जितना गहरा है, वह भाव तथा भाषा की उतनी ही गंभीरता तक पैठ सकता है और पैठता है । साहित्य में भावों की उच्चता का ही विचार रखना चाहिए । भाषा भावों की अनुगामिनी है ।'[१] तात्पर्य यह कि निराला जी भाषा के भावानुसार शाश्वत् परिवर्तन को अंगीकार करते हैं । उन्होंने भाषा के काठिन्य की ही वकालत की है, न तो भाषा - सारल्य का । उनकी भाषा भावों की अनुगामिनी है । भावों पर ही भाषा की सरलता या कठिनता है । इस प्रकार वे भाषा के दोनों सरल और कठिन - रूपों को स्वीकार करते हैं । वे भाषा के निरंतर विकास और परिवर्तन के समर्थक हैं - ' भाषा भी समयानुसार अपना रूप बदलती रहती है । कला के विकास के साथ - साथ साहित्य में नया भाषा भी विकसित होती है ।'[२] अपनी बात को और स्पष्ट करते हुए वे कहते हैं कि ' हमारा यह अभिप्राय भी नहीं कि भाषा मुश्किल लिखी जाय, नहीं, उसका प्रवाह भावों के अनुकूल ही रहना चाहिए । आप निकली हुई और गढ़ी हुई भाषा छिपती नहीं । भावानुसारिणी कुछ मुश्किल होने पर भी भाषा समझ में आ जाती है ।'[३] स्पष्ट है कि भाषा का भावानुरूप प्रकृत, सहज - सरल प्रवाह ही निराला को स्वीकार्य है । भाषा सारल्य का पक्ष लेने वाले हिन्दी भाषियों के प्रति वे कहते हैं - ' हिन्दी को राष्ट्रभाषा मानने या बनाने वाले साल में तेरह बार अति चीत्कार करते हैं - भाषा सरल होनी चाहिए जिसे आबाल - वृद्ध समझ सकें । मैंने आज तक किसी को यह कहते नहीं सुना कि शिक्षा की भूमि विस्तृत होनी चाहिए जिससे अनेक शब्दों का लोगों को ज्ञान हो, जनता क्रमश: उच्च सोपान पर चढ़े ।'[४] उनकी मान्यता है कि प्राचीन बड़े - बड़े साहित्किों की भाषा कभी जनता की भाषा नहीं रही । वे प्रकृति के अनुकूल ही भाषा लिखते आये हैं ।

निराला जी भाषा की नियम बद्धता के विरोधी हैं । वे उसकी प्राकृतिकता के समर्थक हैं । ' भाषा के पैरों में व्याकरण की बेड़ी पड़ी कि उसने झट अपना स्वरूप

---

१ - निराला ग्रन्थावली - १, पृष्ठ ४६४ ।
२ - निराला ग्रन्थावली - १, पृष्ठ ४८० ।
३ - निराला ग्रन्थावली -१, पृष्ठ ४६४ - ६५।
४ - प्रबन्ध पद्म : पृष्ठ २३ ।

बदला और पूर्णता की ओर किसी नये रास्ते से चल पड़ी ।"[१] उनके अनुसार भाषा के भी प्राण होते हैं और प्राण मुक्ति की साधनाएं तो उन्होंने आजीवन की । "दूसरे मनुष्यों की भांति भाषा के भी प्राण होते हैं ।मनुष्य बोलता है या भाषा बोलती है, इसका निर्णय करना जरा कठिन काम है । जिन पांच तत्वों से शरीर बनता है, उसमें भाषा को ही अधिक सूक्ष्म कहा जा सकता है, क्योंकि इसका आकाश तत्व से संबंध है और प्राण आकाशतत्व ही का आध्यात्मिक रूप है । उधर भाषा से ही प्राणों का परिचय मिलता है । भाषा या प्राणों का प्रवाह स्वभावतश्च पूर्णता की ओर होता है ।"[२] भाषा की प्रगति, परिवर्तन और नित नवीनता के विषय में वे कहते हैं कि - "भाषा की शिथिलता जीवन को शिथिल कर देती है । किसी भाव को जल्दी और आसानी से तभी व्यक्त कर सकेंगे जब भाषा पूर्ण स्वतंत्र और भावों की सच्ची अनुगामिनी हो ।"[३] इसलिए वे शब्दों के ढलने की बात करते हैं :- "शब्दों का ढलना - एक दूसरे रूप में बदलना अनिवार्य है यदि कोई भाषा अपना भण्डार पूर्ण रखने का इरादा रखे तो ।"[४] भाषा की स्वाभाविकता के प्रति भी निराला का आग्रह है । रवीन्द्र की कविता का विश्लेषण करते हुए वे उनकी भाषा की स्वाभाविकता और मुक्त-प्रवाह की प्रशंसा करते हैं ।

भाषा की इकाई है शब्द । काव्य भी शब्दों से निर्मित होता है । शब्दों से व्यंजित अर्थ और ध्वनि ही कविता या काव्य का निर्माण करते हैं । काव्य में संगीत तत्व भी शब्द - निसृत ध्वनि पर ही निर्भर करता है । अतः प्रत्येक कवि का ध्यान ध्वनि और उसके मूल शब्दों पर होता है । निराला जी इन बातों को खूब जानते हैं । उनके लिए शब्दों का उतना ही महत्व है जितना भावना या अनुभूति का, कल्पना या प्रेरणा का । वे तो प्रत्येक शब्द को अनादि मानते हैं । शब्द ही काव्य में

---

१ - निराला, जीवन और साहित्य : पृष्ठ ३०३ (निराला का पत्र श्री जा०व०शास्त्री को १२ - ८३) ।
२ - चयन : पृष्ठ १६ ।
३ - चयन : पृष्ठ २५ - २६ ।
४ - चयन : पृष्ठ १६ ।

व्यक्त क्रिया का निर्देश करते हैं।[१] निराला जी कहते हैं - एक ही शब्द के अनेक पर्यायवाची होते हैं, उनमें किस शब्द का प्रयोग उचित होगा, किस शब्द से कविता में भाव की व्यंजना अधिक होगी, इसका ध्यान कवियों को रखना पड़ता है - भाव के वाहक शब्द होते हैं और शब्दों में अर्थ और ध्वनि।[२] शब्दों की ध्वनि से संगीत पैदा होती है और यह प्रत्येक कवि के लिए वांछित है। तात्पर्य यह कि वे शब्दों के प्रयोग के क्षेत्र में बहुत सावधान रहते हैं।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि निराला भाषा को भावानुगामिनी मानते हैं। जैसे हमारे भावों के अनेक रूप हैं वैसे ही भाषा के भी। भाव - परिवर्तन भाषा परिवर्तन का आधार शिला है। इस प्रकार वे साहित्यकार द्वारा सर्वदा एक ही भाषा - प्रयोग के पक्षधर नहीं है। वे भावानुसार भाषा के प्रकृत् प्रवाह को स्वीकार करते हैं। यहां भी वे नियम - साहित्य चाहते हैं।

निराला के काव्य में इस भाषा - दृष्टि का अक्षरशः पालन हुआ है। परुष भावों के लिए परुष शब्द और कोमल भावों के लिए कोमल शब्द उन्होंने प्रयुक्त किए हैं।

संस्कृत शब्दों का प्राचुर्य :-

निराला काव्य में संस्कृत शब्दों की प्रचुरता है। उन्होंने संस्कृत के अप्रचलित पुराने शब्दों का प्रयोग तो किया ही, साथ ही साथ संस्कृत धातुओं की सहायता से नवीन शब्दों का निर्माण भी किया। उनकी कविता में पीताम, निर्धूम, निरभ्र, दिगन्त, अशनिपात प्रयोग हुआ है। अशनिपात से शापित, दिक्कुमारिका, प्रस्त्रवण, उद्गारण, तमिस्त्र, तूर्ण आदि शब्दों का भी प्रयोग हुआ है। संस्कृत के तत्सम शब्दों का प्रयोग

---

१ - निराला काव्य : पुनर्मूल्यांकन : डा० धनंजय वर्मा, पृष्ठ ६८।
२ - रवीन्द्र कविता कानन : पृष्ठ ११८।

कहीं - कहीं तुक मिलाने के लिए किया गया है जैसे अवगुण्ठन के साथ `सुख लुण्ठन`, कीर्णकारिणी के साथ `शीर्णसारिणी` तथा `तीर्ण तारिणी` । इसलिए इनका काव्य दुबोर्ध हो गया है । नवीन शब्दों का निर्माण भी इन्होंने किया है, जैसे - तनिमा । संस्कृत शब्दों की प्रयोग बहुलता के कारण इनका काव्य अस्पष्ट हो गया है और इन्हें स्वयं उनकी टिप्पणियां देनी पड़ी हैं, जैसे - हर्ष-अलि हर - स्पर्शशर आदि ।

समास युक्ति पदावली - `राम की शक्ति पूजा` इसका उत्कृष्ट उदाहरण है :

`शत - शैल - सम्वरणशील, नील नभ गर्जित - स्वर
प्रतिपल परिवर्तित व्यूह-भेद-कौशल-समूह -
राक्षस - विरूद्ध - प्रत्यूह - क्रुद्ध - कपि - विषम - हूह,
विच्छुरित - वह्नि - राजीव - नयन - हत - लक्ष्य बाण,।`

संधियुक्त शब्दावली - कुछ शब्द द्रष्टव्य हैं :-

गर्जितोर्मि, शरदिन्दु, तिर्यग्दृष्टि, चेतनोर्मि, तमस्तूर्य, दिङ्मंडल चित्तिसंधु आदि । इसी की ओर लक्ष्य करते हुए डा0 श्रीकृष्ण लाल ने लिखा है कि एक समृद्ध भाषा शैली का विकास होने लगा, जिसमें संस्कृत के तत्सम तथा ध्वनि व्यंजक शब्दों का प्राधान्य था ।

चित्रात्मकता - निराला जी ने कविता के लिए `चित्रभाषा` की आवश्यकता मानी है । उनके काव्य में शब्द चित्र भरे पड़े हैं :-

(१) श्याम तन, भर बंधा यौवन,
नत - नयन, प्रिय कर्म रत मन

(२) पेट पीठ दोनों मिलकर हैं एक
चल रहा लकुटिया टेक ।

ध्वन्यात्मकता -

(१) नूपुरों में भी रुनझुन रुनझुन नहीं
सिर्फ एक अव्यक्त शब्द सा चुप, चुप, चुप (नूपुर ध्वनि)

(२) झर झर निर्झर गिरिसर में
मरु तरु - मर्मर सागर में (निर्झर की ध्वनि)

(३) कण - कण का कंकण, प्रिय
किंण - किंण ख किंकिणी
रणन - रणन - नूपुर - उरलाज
लोट रणिणी (कंकण, नूपुर आदि की ध्वनि)

भावानुरूप भाषा -

कोमल प्रसंगों में निराला जी ने मस्ण शब्दयुक्त पदबन्धों का प्रयोग किया है। कठोर स्थलों पर उनकी भाषा कर्कश हो उठी है। कोमल - कान्त - पदावली का एक प्रयोग अवलोकन करें :-

` - - - - - याद आया उपवन
विदेह का - प्रथम स्नेह का लतान्तराल मिलन
नयनों का - नयनों से गोपन - प्रिय सम्भाषण --।` आदि।

अब परुष भावों की अभिव्यंजना करने वाली ओजो गुण मंडिता पदावली की महाप्राणता देखें :-

राघव - लाघव - रावण - वारण - गत - युग्म - प्रहर
उद्धत लंकापति - मर्दित - कपिदल - बल - विस्तार --- । आदि

निराला जी ने अपने काव्य में स्त्री - पुरुष व्यंजक माधुर्य और ओजो गुण मंडिता भाषा का प्रयोग ' तुम और मैं ' में व्यक्त किया है :-

' तुम तुंग हिमालय श्रृंग
और मैं चंचल गति सुर - सरिता ।
तुम विमल हृदय उच्छ्वास
और मैं कान्त - कामिनी कविता ।'

मनोवैज्ञानिक स्थलों की भाषा - मनोवैज्ञानिक तथ्यों का निरूपण उनका ध्येय है । इसलिए उन्हें भाषा गढ़नी भी पड़ी है । उन्होंने बड़ी सरलता से छोटी - छोटी बातों को लेकर बड़े - बड़े मानसिक घात - प्रतिघातों को अपनी वाणी द्वारा सजीव कर दिया है । प्रमाण स्वरूप ' तुलसीदास ' का यह छन्द -

जब आया फिर देहात्म बोध
बाहर चलने का हुआ शोध
रह निर्विरोध, गति हुई रोध प्रतिकूला
खोलती मृदुल दलबन्द सकल
गुदगुदा विपुल धरा अविचल ।

चलती हुई भाषा - एक उदाहरण पर्याप्त होगा :-

' हिल हिल
खिल खिल
हाथ हिलाते
तुम्हें बुलाते
विप्लव ख से छोटे ही हैं शोभा पाते ।' (बादल राग)

विभिन्न भाषाओं के शब्द - निराला जी ने उर्दू के शब्दों का वहिष्कार नहीं किया है।

` कुकुरमुत्ता ` में उर्दू के शब्दों का प्राचुर्य है :-

एक थे नव्वाब,
फारस से मंगाए थे गुलाब,
जवां पर लफ़्ज प्यारा ।`

इसी तरह रंगोआब, ख्वाब, सफ़ेद, जर्द आदि का प्रयोग है । अंग्रेजी के शब्दों का ग्रहण भी उन्होंने किया है, जैसे - रेल, केमरा, ग्रेड, कारनेट, ड्रम, गिटार, रोमांस प्रोग्रेसिव और पीस आदि ।

व्याकरण के कुछ विशेष प्रयोग - निराला जी ने अपनी कविताओं मे व्याकरण संबंधी कुछ विशेष प्रयोग भी किए हैं । ऐसे प्रयोग कर्ता और क्रिया के रूपों से विशेष संबंध रखते हैं । निराला जी के मत से ` तुम ` शब्द का प्रयोग दो अर्थों में होता है - (१) अपने से बड़े के लिए सम्मानार्थ में और (२) समान आयु अथवा समान पद वाले के अर्थ में । जब सम्मानार्थ में ` तुम का प्रयोग होता है तब निराला जी भूतकालीन क्रिया को अनुनासिक बना देते हैं । किन्तु जब समानता के अर्थ में प्रयोग किया जाता है तो सहायक क्रिया अनुनासिकता से रहित प्रयुक्त की जाती है । ` गीतिका ` के ६१वें गीत में - ` कण्ठ की तुम्ही रही स्वर - हार ` के रही ` स्थान पर ` रहीं ज्यादा उपयुक्त था, परन्तु निराला ने वैसा न करके एक क्रान्तिकारी कदम उठाया है ।

द्विरुक्ति - शब्द चित्र, ध्वनिशीलता और अतिरिक्त बल प्रदान करने के लिए द्विरुक्ति का प्रयोग होता है । कुछ उदाहरण द्रष्टव्य है :-

(१) सुन सुन घोर वज्र हुंकार

(२) हिल हिल
खिल खिल
हाथ हिलाते ।

इस प्रकार निराला ने ' उत्ताल तरंगाघात - प्रलय - घन - गर्जन - प्रबल ' आदि शब्दावली द्वारा वाणी के साथ विद्वन्मंडली में धाक जमा ली है तो दूसरी ओर ' जागो फिर एक बार ' द्वारा जन - मानस की भाषा में उद्घोष करते हैं ।

इस प्रकार निराला की काव्य-भाषा के विविध स्तर हैं । जो भाषा ' राम की शक्ति पूजा ' और तुलसीदास ' में है वही अन्य रचनाओं में नहीं । छायावाद के अन्य कवियों में भाषा की एकतानता के दर्शन होते हैं जबकि निराला में वैविध्य । ' पंत के शब्द अपेक्षाकृत् छोटे, असंयुक्त वर्ण वाले, हल्के तथा वायवी हैं । प्रसाद के शब्द अधिक प्रगाढ़, मधुमय और नादानुकृतिमय है । महादेवी के शब्दों में रुपये की सी स्पष्ट ठनक और खनक है और निराला में संधि समास विविध जाति और ध्वनि वाले शब्दों में भी अनुप्रासमय व्यंजन संगीत उत्पन्न करने की चेष्टा है । छायावाद के इन चारों कवियों में निराला को छोड़कर शेष तीनों में सर्वत्र अपने ढंग के प्रायः एक से शब्दों का संकल्प मिलता है, केवल ' निराला ' में शब्द चयन की विविधता तथा अनिश्चितता है ।[१] इसके अतिरिक्त निराला की भाषा में ओज का स्वर अत्याधिक मुखर है जो अन्य छायावादियों में नहीं है । शब्द प्रयोग और गठन की दृष्टि से भी निराला की भाषा अधिक ठोस ओज समर्थ है । निराला का वर्ण - संगीत भी असाधारण है । वे शब्दों के संगीत पर भी विशेष बल देते हैं । इसीलिए उन्होंने स्वरों और व्यंजनों के अनुप्रासों पर विशेष ध्यान दिया है । छायावादी काव्य में निराला की भाषा का एक विशेष रूप है जिससे वह स्पष्ट रूप से झलक उठती है । छायावादी मसृण पदबन्ध, आन्तरिकता - संभार संयुक्त भाषा से निराला की शक्ति, ओज और गोड़ीवृत्तिमयी भाषा एकदम पृथक है । कभी - कभी निराला की भाषा पर अस्पष्टता और दुरुहता का भी आरोप लगाया जाता है । इस भाषा - काठिन्य - दोष का परिहार करते हुए डा० धनंजय वर्मा लिखते हैं :- ' सामान्यतः यह कहा जाता है कि उनकी भाषा संस्कृत निष्ठ क्लिष्ट है । लेकिन मैं समझता हूं यह आक्षेप का

---

१ - आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियां : डा० नामवर सिंह, पृष्ठ ३७ ।

आधार नहीं बन सकता । स्थायी मूल्य के काव्य के साथ सुन्दर अभिव्यक्ति और भाव - औदात्य के प्रेषण चलताऊ भाषा की कल्पना मुझे कुछ दुरूह लगती है । कवि की तीव्रतम अनुभूति को उसी तीव्रता और स्पष्टता से व्यंजित करने के लिए वह भाषा समर्थ नहीं कही जा सकती । सांस्कृतिक पक्ष का निर्वहन भी इस भाषा से नहीं हो सकता । सांस्कृतिक कलाकार कहे जाने वाले निराला की भाषा में एक परिष्कृति और औदात्य के अनुकूल गाम्भीर्य हो तो वह आक्षेप्य नहीं होना चाहिए । संस्कृति का मुखर निर्वहन परिष्कृत भाषा ही कर सकती है । भाषा भावानुरूपिणी भी होनी चाहिए और यदि निराला के भाव मौलिक उदात्त हैं तो भाषा का परिवेश नितांत साधारण कल्पित नहीं किया जा सकता ।'[१]

समष्टि रूप में, निराला की काव्य भाषा ने छायावादी काव्य भाषा को प्रचुर शब्दों और अभिनव प्रयोगों से आपूरित किया। उनकी भाषा में वैविध्य है जो भावानुसार है । उनकी काव्य भाषा में एक ओज, शक्ति और पौरुष है । अतः निराला की काव्य भाषा की अनेक मंजिलें हैं । वे प्रसंगानुकूल आप निकली हुई प्रकृत प्रवाहमयी भाषा के पक्षधर हैं :-

हमारा यह अभिप्राय नहीं कि भाषा मुश्किल लिखी जाय, नहीं, उसका प्रवाह भावों के अनुकूल ही रहना चाहिए । आप निकली हुई और गढ़ी हुई भाषा छिपती नहीं । भावानुसारिणी कुछ मुश्किल होने पर भी भाषा समझ में आजाती है । उसके लिए कोश देखने की जरूरत नहीं होती ।'[२]

---

१ - निराला काव्य : पुनर्मूल्यांकन : डा० धनंजय वर्मा : पृष्ठ ६८-६६ ।

२ - निराला ग्रन्थावली - १, पृष्ठ ४६४ - ४६५ ।

(२) निराला की अलंकार दृष्टि :-

निराला जी अलंकारों के विषय में स्वच्छन्द दृष्टिकोण रखते हैं। उन्होंने अलंकार रहित अर्थात् निरलंकार भाषा को विशेष महत्व प्रदान किया है :-

" अलंकार - लेश -रहित, श्लेष-हीन
शून्य विशेषणों से -
नग्न नीलिमा सी व्यक्त
भाषा सुरक्षित वह वेदों में आज भी।" (परिमल)

वे काव्य में अलंकारों के प्रयोग को मुख्य नहीं मानते परन्तु उन्हें काव्य का एक गुण अवश्य मानते हैं। तुलसीकृत रामायण के आदर्श की चर्चा करते हुए उन्होंने लिखा है

" शृंखला के साथ पदबंध, अनुप्रास, अलंकारादि श्रेष्ठ काव्य गुण तो गोस्वामी जी ने उसमें दिखाए ही हैं, और उनकी यह सरल - स्वाभाविक और सुन्दर गति उसकी लोक-प्रियता का प्रधान कारण भी है। किन्तु, फिर भी, काव्य कला से कहीं बढ़कर उसके वे भाव हैं - - - -।[१] इस प्रकार वे काव्य में अलंकारों को चाहते तो हैं परन्तु यदि वे स्वाभाविक रूप से आए हों। यद्यपि यह लोकविश्रुत है कि निराला ने काव्य के हर क्षेत्र में नवीनता और क्रान्ति का आवाहन किया फिर भी वे परम्परा-विमुख नहीं थे। उन्होंने यही दृष्टि अलंकारों के विषय में भी रखी है :-

" इससे प्राचीन रस अलंकारवादी हमलोगों पर जो आक्षेप करते हैं उसका यथार्थ उत्तर हमारी तरफ से उन्हें प्राप्त होगा। रस और अलंकारों की प्राचीन प्रथा हम लोग नहीं मानते, ऐसी बात नहीं, एक विशेषता उन्हें मानने में और ज्यादा है, वह यह कि हम मित्रता भी मानते हैं और एकता भी, जिस एकता का प्रभाव पराधीन,

---

१ - निराला ग्रन्थावली - १ : पृष्ठ ४५२।

छन्दशास्त्र तथा रस अलंकार आदि की बेड़ियों में फंसा हुआ ब्रज साहित्य आज तक दे सका है - हमें देखने को नहीं मिला ।'[१] इस उद्धरण से स्पष्ट है कि निराला जी प्राचीन अलंकारों की परम्परा को मानते हैं परन्तु वहीं तक जहां तक कि वे भावों को अभिव्यक्त करने में सहायक हों । अत: उन्होंने अलंकारों का प्रयोग अपनी स्वच्छन्द प्रवृत्त्यानुसार भावों की सफल अभिव्यक्ति के लिए किया है । ~~वे~~ उन्हें अलंकारों के प्रयोगों से वितृष्णा हो चुकी है । उनकी यही मत था कि प्रयत्न साध्य अलंकार योजना से काव्य सौष्ठव हीन और निष्प्रभ हो जाता है ।[२] निराला जी का कथन है कि जिसे हम कला कहते हैं वह न केवल वर्ण, शब्द, रस, अलंकार या ध्वनि की सुन्दरता है अपितु इन सबके समन्वित सौन्दर्य की सीमा है । हिन्दी में उत्प्रेक्षा और रूपक को कला समझने वालों के प्रति वे कहते हैं कि :-

' हिन्दी में कला को विवेचन में प्राय: यही हाल रहा है । अधिकांश तो उत्प्रेक्षा और रूपक को ही कला समझते हैं । कला केवल वर्ण, शब्द, छन्द, अनुप्रास, रस, अलंकार या ध्वनि की सुन्दरता नहीं, किन्तु इन सभी से संबद्ध सौन्दर्य की पूर्ण सीमा है ।[३]

अस्तु निराला जी का अलंकार विषयक मत सर्वथा स्वतंत्र है । उन्होंने परम्पराविहित और परम्परा विच्छिन्न दोनों रूपों में अलंकारों का प्रयोग किया है ।

अलंकार - व्यवहार -

निराला काव्य में ' उपमा ' का प्राचुर्य है । ' परिमल ' की ' उसकी स्मृति ' में किसी सुन्दरी के मुस्कान के लिए उपमाओं की लड़ी दर्शनीय है :-

मृदु सुगन्ध - सी कोमल दल फूलों की
शशि-किरणों की सी वह प्यारी मुस्कान
स्वच्छन्द गगन-सी मुक्त, वायु सी चंचल
कोई स्मृति की पिक्चर आई सी पहचान, - (परिमल)

---

१ - निराला ग्रन्थावली - १, पृष्ठ ५६० ।
२ - निराला छायावादी काव्य : डा० कृष्णचन्द्र वर्मा, पृष्ठ २८२ ।
३ -

मूर्त के लिए अमूर्त उपमा विधान द्रष्टव्य है :-

मन्द पवन के झोंकों से लहराते काले बाल
कवियों के मानस की मृदुल कल्पना के से जाल । (वही)

विधवा कविता में तो मालोपमा दर्शनीय है। वह इष्टदेव के मन्दिर की पूजा सी, शान्त दीप शिखा और क्रूर - काल ताण्डव की स्मृति रेखा आदि में भारतीय विधवा की कितनी मर्मस्पर्शी अभिव्यक्ति हो उठी है। इसी प्रकार कुछ और उपमाएं ली जा सकती हैं :-

(१) आंखें अलियों सी
किस मधु की गलियों में फंसी - (अपरा)

(२) अलसता की सी लता - (अपरा)

रूपक - भारत माता का एक सुन्दर रूपक (सांग रूपक) द्रष्टव्य है :-

`भारति, जय, विजय करे
कनक, शस्य कमल धरे।
लंका पदतल शतदल,
गर्जितोर्मि सागर जल
धोता शुचि चरण - युगल
स्तव कर बहु अर्थ भरे। (अपरा)

अन्योक्तियों की तो निराला काव्य में भरमार है। `वनवेला` में तो उन्होंने वनवेला के व्याज से साहित्यिकों के उपेक्षित एवं संघर्षमय एकाकी जीवन की ओर संकेत किया है:-

`बोला मैं - बेला, नहीं ध्यान,
लोगों का जहां खिली हो बनकर वन्य गान!
जब ताप प्रखर
लघु प्याले में अतल की सुशीतलता ज्यों भर
तुम करा रही हो यह सुगन्ध की सुरा-पान।` (अपरा)

` कुकुरमुत्ता ` तो पूरा अन्योक्ति ही है । ` जुही की कली ` में वियोगिनी नायिका और उसके प्रवासी प्रियतम के प्रति अन्योक्ति स्पष्ट है । ` तुम और मैं ` में आदि से अन्त तक उल्लेख अलंकार है ।

संदेह अलंकार ` नयन ` शीर्षक कविता में अवलोकनीय है :-

मद भरे ये नलिन नयन मलीन हैं,
अल्प जल में या विकल लघु मीन हैं ?
या प्रतीक्षा में किसी की शर्वरी
बीत जाने पर हुए ये दीन हैं ?

विरोधाभास -

क्या जाने वह कैसी थी आनन्द-सुरा अधरों तक आकर
बिना पिटाए प्यास गई जो सूख जलाकर अंतर - (प्रगल्भ प्रेम: अनामिका)

` यमुना के प्रति ` में स्मरण अलंकार का उदाहरण है । अतिशयोक्ति का उदाहरण ` पंचवटी प्रसंग ` में देखने को मिलता है :-

सृष्टि भर की सुन्दर प्रकृति का सौन्दर्य भाग
खींच कर विधाता ने भरा है इस अंग में -
- - - - - - - - - - - - - - - - -
और यह भी सत्य है कि
ऐसी ललाम वामा चित्रित न होगी कभी - (निराला ग्रन्थावली - १)

` जलद के प्रति ` कविता में अपह्नुति, काव्य लिंग, परिकरांकुर और अनुमान सभी एक साथ विद्यमान हैं :-

जलद नहीं, जीवनद, जिलाया
जब कि जगज्जीवना मृत को ।
तपन-ताप संतृप्त - तृषातुर
तरुण - तमाल तलाश्रित को - (निराला ग्रन्थावली :१)

पाश्चात्य अलंकार -

ध्वन्यर्थ व्यंजना (Onomatopoeia)

(१) कण कण कर कंकण, प्रिय
किण किण रव किंकिणी
रणन रणन नूपुर, उर लाज
लौट रंकिणी - (गीतिका)

(२) झूम झूम, मृदु गरज गरज घन घोर !
राग अमर ! अम्बर में भर निज रोर !
झर झर निर्झर गिरि सर में
घर तरु मरु मर्मर सागर में - - - (निराला ग्रन्थावली :१)

विशेषण - विपर्यय - (Transferred Epithet)

चल चरणों का व्याकुल पनघट,
कहाँ आज वह बृन्दावाम ? (अपरा)

'प्रगल्भ प्रेम' और 'आकुल तान' जैसे पद भी इसी के उदाहरण हैं ।

मानवीकरण (Personification) -

दिवसावसान का समय
मेघमय आसमान से उतर रही है
वह संध्या सुन्दरी परी-सी
धीरे - धीरे धीरे । (अपरा)

इस प्रकार निराला की दृष्टि भारतीय और पाश्चात्य दोनों प्रकार के अलंकारों के प्रति रही है । उनके काव्य में अलंकार भाव - अभिव्यक्ति के सहायक होकर आये हैं । भावों की व्यंजना का प्राथमिक लक्ष्य निराला के काव्य अलंकरण का भी आधार है । निराला के अलंकार भावों की स्वाभाविकता के सहायक हैं ।

३ - निराला की छन्द दृष्टि :

निराला जी जहां काव्य - वस्तु, काव्योद्देश्य और काव्य प्रक्रिया आदि क्षेत्रों में नवीनतावादी रहे हैं वहीं छन्दों के क्षेत्र में भी । यहां वे मुक्तिवादी भी दृष्टिगोचर होते हैं । वे छन्दों का बंधन कदापि नहीं स्वीकार करते :-

१ - प्रिये, छोड़कर बन्धनमय छन्दों की छोटी राह ।
(प्रगल्भ-प्रेम: अनामिका)

२ - बन्दूं पद सुन्दर तव
छन्द नवल स्वर गौरव - (अपरा)

३- नूपुर के सुर मन्द रहे
चरण न जब स्वच्छन्द रहे - (अपरा)

४ - आज हो गये ढीले सारे बंधन
मुक्त हो गये प्राण - (अपरा)

पूर्ण विवेचित है कि छायावादी कविता में मात्रिक छन्दों की प्रधानता है । निराला इसके अपवाद नहीं हैं । इन्होंने भी मात्रिक छन्दों को अपनाया है परन्तु परम्परा विद्रोह और रूढ़ि त्याग के साथ । निराला के समस्त काव्यों में निम्नांकित छन्द प्रयुक्त हैं :-

(१) सम मात्रिक सान्त्यानुप्रास छन्द -

` परिमल ` के प्रथम खण्ड की कविताओं में इस छन्द का प्रयोग शास्त्रीय नियमों के साथ किया गया है । ` परिमल ` की भूमिका में वे कहते हैं:-

` प्रथम खण्ड में सम मात्रिक सान्त्यानुप्रास कविताएं हैं ।`[१] इस छन्द के प्रत्येक चरण में मात्राओं की संख्या सम रहती है तथा प्रथम - द्वितीय और तृतीय

---

१ - परिमल : भूमिका : पृष्ठ ८ ।

चतुर्थ चरणों में अन्त्यानुप्रास (तुक) मिलता है :-

वह अभिराम कामनाओं का, लज्जित उर, उज्वल विश्वास,
वह निष्काम दिवा - विभावरी, वह स्वरूप - मद - मंथुल हास,
वह सुकेश विस्तार कुंज में, प्रिय का अति उत्सुक संधान,
तारों के नीरव समाज में, यमुने यह तेरा मृदु गान । (परिमल)

यहां प्रत्येक चरण में ३१ मात्रायें और प्रथम - द्वितीय तथा तृतीय चतुर्थ चरण के तुक समान हैं । निराला ने सुविधानुसार परिवर्तन भी किया है जो `वेला` के एक गीत में द्रष्टव्य है ।[१]

(२) अर्द्धसम मात्रिक सान्त्यानुप्रास छन्द :

इस छन्द के प्रथम - तृतीय तथा द्वितीय - चतुर्थ चरणों मे समानता होती है । छायावादी कवियों ने इसके पर्याप्त प्रयोग किए हैं । परन्तु निराला इस क्षेत्र में सबसे आगे हैं । प्राचीन छन्दों के रूपों में परिवर्तन करके उन्होंने उन्हें नए ढंग से प्रस्तुत किया, साथ ही छन्दों के अर्द्धसम मात्रिक और अकार मात्रिक मुक्त छन्दों का भी प्रथम प्रयोग उन्हीं के द्वारा हुआ । निम्नांकित पंक्तियों में निराला ने १२ मात्राओं बाद यति और अंत में दो गुरु वाले कुण्डल छन्द को अर्द्धसम या मात्रिक रूप देकर नवीन प्रयोग किया है :-

जननि, जनक, जननि जननि (६, ६ मात्रायें)
जन्म भूमि भाषे (६, ४ मात्रायें)
जागो नव अम्बर पर (६, ६ मात्रायें)
ज्योति स्तर वासे । (६, ४ मात्रायें) [२]

---

१ - वेला : पृष्ठ ५६ ।
२ - निराला : सं० पद्म सिंह शर्मा `कमलेश` : पृष्ठ २४३ : शिवप्रसाद गोयल के लेख से ।

(३) विषम मात्रिक सान्त्यानुप्रास छन्द :

यह छन्द ` परिमल ` के दूसरे खण्ड की कविताओं में है । निराला के अनुसार यह छन्द ह्रस्व - दीर्घ मात्रिक संगीत पर चलता है । चारों चरणों के लक्षण समान नहीं होते किन्तु तर्क समान होती हैं । यह अमृत ध्वनि या कुण्डलियां के समान ६ चरणों का भी हो सकता है । उदाहरण -

` भैरवी मेरी तेरी फूंका
तभी बजेगी मृत्यु लड़ाएगा जब तुमसे पंजा '
लेगी खड्ग और तू खप्पर
उसमें रुधिर भरूंगा मां
मैं अपनी अंजलि भर भर
उंगली के पोरों में दिन गिनता ही जाऊं क्या मां -
एक बार बस और नाच तू श्यामा ।

(परिमल : आह्वान : पृष्ठ १३)

इसी प्रकार निराला के ` तुलसीदास ` में भी विषम मात्रिक सान्त्यानुप्रास छन्द हैं । पंत ने भी इस छन्द का प्रयोग किया है परन्तु पंत के छन्दों में स्वर की क्रमिक लड़ियां या सममात्राएं अधिक मिलती हैं और निराला के छन्दों में बहुत कम । ` राम की शक्ति पूजा ` में इस छन्द का एक नया प्रयोग है । इसके प्रत्येक चरण में २४ मात्राओं अर्थात् तीन - तीन अष्टकों से युक्त मात्रा क्रम का कहीं भी व्यतिक्रम नहीं हुआ है । इसमें निराला की मौलिकता की छाप के कारण आलोचकों ने इसे ` शक्ति पूजा छन्द कहा है ।[१] यह शक्ति पूजा नाम अशास्त्रीय है । शास्त्रीय दृष्टि से यह सामाजिक प्रवाह पूर्ण काव्य (रन आन पोयेट्री) है । जिसके छन्द को रोला छन्द कहा जायगा ।

---

१ - आधुनिक हिन्दी काव्य में छन्द - योजना : डा० पुत्तूलाल शुक्ल, पृष्ठ २६० ।

यह २४ मात्राओं का होता है । यति और अन्त्यक्रम के संबंध में भी अनेक नियम हैं । किन्तु आधुनिक काव्य में इतनी सूक्ष्मता का निर्वाह नहीं हुआ है ।[१]

(४) निराला का विषम छन्द, मुक्त छन्द या स्वच्छन्द छन्द :

निराला ने ` मुक्त छन्द ` लिखने की बात स्वयं स्वीकार की है :-

` तब भी मैं इसी तरह समस्त
कवि जीवन में व्यर्थ भी व्यस्त
लिखता अबाध गति मुक्त छन्द । -- (सरोज स्मृति : अपरा)

मुक्त छन्द में भावों का अकृत्रिम चित्र होता है :-

` मुक्त छन्द,
सहज प्रकाशन वह मन का
निज भावों का प्रकट अकृत्रिम चित्र ।` - (निराला ग्रन्थावली -१)

विषम छन्द निराला की एक मौलिक उद्भावना है जिसका ` मुक्त छन्द ` एक भावात्मक विशेषण है । यह छन्द भावों के प्रवाह के अनुसार चलता है । ` मुक्तछन्द की रचना में मैंने भाव के साथ रूप सौन्दर्य पर ध्यान रखा है, बल्कि कहना चाहिए, ऐसा स्वभावतः हुआ, नहीं तो मुक्त छन्द न लिखा जा सकता, वहां कृत्रिमता नहीं चल सकती ।`[२]

इस छन्द के सभी चरण असमान होते हैं अथवा इसके प्रत्येक चरण में वर्णों और मात्राओं की संख्या असमान होती है । यह ४ चरण या उससे अधिक का भी होता है । आचार्य हलायुध के अनुसार, विषम छन्द वह है जिसके सभी चरणों और अर्द्धसम चरणों में असमानता हो ।[३]

---

१ - छायावादी काव्य और निराला : डा० शान्ति श्रीवास्तव : पृष्ठ २६१ ।
२ - प्रबन्ध प्रतिमा : पृष्ठ २७५ ।
३ - आधुनिक हिन्दी काव्य में छन्द योजना : डा० पुत्तूलाल शुक्ल ४०३-४०५ ।

कुछ विद्वानों ने निराला के विषम मात्रिक सान्त्यानुप्रास और मुक्तछन्द को समान माना है।[१] इसके विपरीत निराला ने स्वयं 'परिमल' में दोनों में अंतर माना है। मुक्त छन्द तो, निराला के अनुसार, सब प्रकार के बन्धनों से मुक्त हैं, तुक और मात्रा के बंधनों से भी। किन्तु विषम मात्रिक छन्द में बंधन होते हैं। विषम छन्द में चरणों की संख्या और विस्तार अनिश्चित और स्वतंत्र होते हैं। उसमें प्रारम्भ से अंत तक लयाधार एक सा होता है। विषम मात्रिक सान्त्यानुप्रास छन्द में छन्दों की इकाई निश्चित रहती है और आगे उसी की आवृत्ति होती है। इस छन्द की समस्त लयें पुरानी होती हैं परन्तु उनका अन्त्यक्रम, परिसंख्यान (मात्रा व संख्या बन्धन) और मात्रा क्रम नवीन होता है। इस प्रकार के छन्द की एक इकाई के निर्माण में कवि को पूर्ण स्वतंत्रता होती है, परन्तु एक बार इकाई के निश्चित हो जाने पर उसकी आवृत्ति आवश्यक हो जाती है। इस छन्द में इकाई के बंधन निर्वाह को प्रत्येक कवि को सजग रखना पड़ता है।

परन्तु मुक्त छन्द में इन नियमों का पालन नहीं करना पड़ता है। इसमें सभी कुछ - चरणों की संख्या, मात्रा - संख्या और सान्त्यानुप्रास क्रम - कवि की इच्छा पर निर्भर करते हैं। इस छन्द की निर्माण - प्रक्रिया में शास्त्रीयता या छन्द बंधन नहीं, अपितु भावानुसार लयाधार होते हैं जिनके कारण चरण लघु या दीर्घ होते हैं और इन लघु या दीर्घ चरणों का अन्त्यानुप्रास अन्त, मध्य या प्रारम्भ में आता है। इस प्रकार अन्त्यानुप्रास का विधान तो विषम या मुक्त छन्दों में भी होता है परन्तु उसका एक निश्चित स्थान नहीं रहता। जहां तक विषम छन्द के अन्त्यानुप्रास का प्रश्न है, यहां यह छन्द का गुण न होकर काव्य का गुण हो जाता है। कवि भावना की अभिव्यक्ति स्वभावतः लय - मैत्री ग्रहण करती है, इसीलिये निर्माण के कारण अभ्यास ही अन्त्यानुप्रास की योजना बन जाता है। इसी अनुप्रास योजना के कारण

---

१ - (क) आधुनिक हिन्दी कविता में शिल्प : डा० कैलाश बाजपेयी, पृष्ठ १६४।
(ख) निराला की काव्य साधना : वीणा शर्मा : पृष्ठ ८०।

विषम छन्द (मुक्त छन्द) भी काव्य का वाहक माना जाता है अन्यथा वह गद्य की श्रेणी में आ जाता ।[१] इस प्रकार के सब प्रकार के बन्धनों से मुक्त छन्द को निराला छन्द की श्रेणी में रखते हुए कहते हैं कि - ' मुक्त छन्द तो वह है जो छन्द की भूमि में रहकर भी मुक्त है ।' पंक्तियों के आकार का छोटा - बड़ा होना मुक्त छन्द का लक्षण नहीं है । निराला का ' कुकुरमुत्ता ' भी इसका उदाहरण नहीं है । यद्यपि कि उसके चरण विषम हैं, फिर भी उसमें तुकबन्दी है, जैसे :-

और अपने से उगा मैं
बिना दाने का चुगा मैं
कलम मेरा नहीं लगता
मेरा जीवन आप जगता - (कुकुरमुत्ता, पृष्ठ ४०)

यहां तुके तो मिल जाती हैं यद्यपि कि पंक्तियां विषम हैं । अत: मुक्त छन्द में न तो छन्द के बंधक होते हैं और न तुकों की अनिवार्यता । यह छन्द तो केवल लयाश्रित होता है।

कुल मिलाकर, मुक्त छन्द में चरण विषम होते हैं, वह अतुकान्त होता है और सबसे मुख्य बात यह कि उसमें किसी न किसी प्रकार का लयाधार होता है । इस संदर्भ में ' शिवाजी का पत्र ' शीर्षक कविता द्रष्टव्य है :-

वीर सरदारों के सरदार ! - महाराज
बहु जाति क्यारियों के पत्र पुष्प - दल भरे
आन - बान - शान वाले भारत - उद्यान के
नायक हो, रक्षक हो
वासन्ती सुरभि को हृदय से हरकर
दिगन्त भरने वाला पवन ज्यों - (अपरा)

---

१ - छायावादी काव्य और निराला : डा० कुमारी शान्ति श्रीवास्तव, पृष्ठ २७१ ।

निराला के इस मुक्त विषम छन्द के लय का आधार है कवित्त या घनाक्षरी या मनहरण वर्णिक मुक्त छन्द । " हिन्दी में मुक्त काव्य कवित्त छन्द की बुनियाद पर सफल हो सकता है । कारण, यह छन्द चिरकाल से इस जाति के कण्ठका हार हो रहा है । दूसरे, इस छन्द में एक विशेष गुण यह भी है कि इसे लोग चौताल आदि बड़ी तालों में तथा ठुमरी को तीन तालों में भी सफलता पूर्वक गा सकते हैं और नाटक आदि के समय इसे काफी प्रवाह के साथ पढ़ भी सकते हैं ।---- यदि हिन्दी का कोई जातीय छन्द चुना जाय, तो वह यही होगा ।"[१] इसी वर्णिका कवित्त छन्द के आधार पर निराला जी ने हिन्दी को विषम वर्णिक छन्द उपहार स्वरूप दिया है । जो उनकी सबसे बड़ी देन है ।

कवित्त ३१ वर्णों का वह छन्द है जिसका विधान ८,८ ८, ७ वर्णक्रमों पर आधारित है । कभी - कभी यह बदलता भी रहता है, जैसे ८, ८, ७, ८ अथवा ७, ६, ७, ८ आदि यतिक्रमों के अनुसार । किन्तु प्रधानत: लयानुसार यह ८, ८, ८ ७ के ही यति क्रमों का अनुसरण करता है । निराला ने इसी छन्द को आधार मानकर एक नवीन छन्द विधान - मुक्त छन्द - का प्रणयन किया है । उनके मुक्त या विषम छन्द में भी कवित्त के इन्हीं अटकों की अनुवर्तना है पर कहीं - कहीं इनका लयाधार मात्रा मूलक भी है । अत: निराला जी ने अपने मुक्त छन्द में वर्ण और मात्रा दोनों के आधार पर लय का निर्माण किया है । इस प्रकार के छन्द को सर्वप्रथम पंत जी ने 'अदार मात्रिक छन्द'[२] कहा । वस्तुत: यदि विचार किया जाय तो कवित्त छन्द में वर्णिक लय मैत्री के साथ - साथ मात्रिक लय मैत्री भी चलती है परन्तु वह नगण्य होती है । इसीलिए उसका विवेचन नहीं किया जाता । डा० पूलू लाल शुक्ल ने अपने शोध

---

१ - परिमल : भूमिका : पृष्ठ २० ।

२ - छायावाद : पुनर्मूल्यांकन : पंत : पृष्ठ १०३ ।

प्रबन्ध में इसकी पुष्टि हेतु डा० रसाल का मत उद्धृत किया है।[१] इस छन्द में आर्ट आफ रीडिंग का आनन्द मिलता है[२]। इसीलिए निराला जी ने मुक्त छन्द (अप्सरा मात्रिक छन्द) को पाठ्य कहा है, गेय नहीं।[३] पाठ्य कला से अनभिज्ञ होने पर इस छन्द का आनन्द नहीं लिया जा सकता है। निराला ने स्वयं कहा है कि "कुछ लोगों को अनभ्यास के कारण पढ़ने में असुविधा होती है। छन्द की गति का कोई दोष नहीं।"[४] मुक्त छन्द के इस "आर्ट आफ रीडिंग" या उच्चारण कला पर निराला ने यथेष्ट विवेचन "पंत जी और पल्लव" में किया है। पंत जी के अनुसार कवित्त छन्द हिन्दी का औरस छन्द या जातीय छन्द नहीं है। "कवित्त छन्द, मुझे जान पड़ता है, हिन्दी का औरस जात नहीं, पोष्य पुत्र है, न जाने, यह हिन्दी में कैसे और कहां से आ गया, अक्षर मात्रिक छन्द बंगला में मिलते हैं, हिन्दी के उच्चारण - संगीत की ये रक्षा नहीं कर सकते।"[५] निराला और पंत में यहीं मतभेद हो जाता है निराला जी कवित्त को हिन्दी का जातीय छन्द मानते हैं। आधुनिक शोधों ने भी पंत जी के कथन का खंडन कर दिया है।[६]

निराला ने मुक्त छन्दों का संबंध वेदों से स्थापित किया है।[७] गायत्री मंत्र को इन्होंने आर्यों की स्वच्छन्द प्रकृति का सबसे बड़ा परिचायक माना है। सम्भव है मुक्त छन्द के प्रयोग में निराला बंगला से प्रभावित न होकर वेदों से प्रभावित हुए हों, किन्तु प्रतीत यह होता है कि मुक्त छन्द के विदेशी प्रभाव के कारण अपना घोर विरोध होते देख कर उन्होंने खोज की और उसका मूल वेदों में पा लिया हो। जो भी हो परन्तु इतना तो स्पष्ट ही है कि निराला हिन्दी में इस छन्द को प्रथम प्रयोक्ता अवश्य थे। मुक्त छन्द के इस प्रथम प्रयोक्ता ने अपनी मौलिकता की उस पर छाप लगा दी

---

१ - आधुनिक हिन्दी काव्य में छन्द योजना : डा० पुत्तूलाल शुक्ल, पृष्ठ १६२।
२ - परिमल : भूमिका : पृष्ठ २१।
३ - छायावादी काव्य और निराला : डा०(कु०) शान्ति श्रीवास्तव, पृष्ठ २७२।
४ - परिमल : भूमिका : पृष्ठ २०।
५ - पल्लव : प्रवेश : पृष्ठ ३८।
६ - आधुनिक हिन्दी काव्य में छन्द योजना : डा० पुत्तूलाल शुक्ल, पृष्ठ १६०।
७ - परिमल : भूमिका : पृष्ठ १३।

जिसका विवेचन उनपर हो चुका है । इस प्रकार ` प्राचीन छन्द कविता को सम्यानुकूल बनाकर जीवन के साथ साहित्य का शिलान्यास करने में वे सबसे आगे रहे हैं -- मुक्त छन्द और मुक्त संगीतात्मकता के लिए छायावाद उनका चिर ण ी रहेगा ।`[१]

५ - संगीत रागाश्रित छन्द :-

मुक्त छन्दों के प्रयोक्ता होने के बावजूद भी निराला काव्य और संगीत से विरत नहीं हुए । उनकी अधिकांश रचनाएं छन्दोबद्ध एवं गीति तत्वों से भर पूर है । ` गीतिका ` में काव्य और संगीत का मधुर सन्निवेश है । इसमें उनका संगीत प्रेम, सूर - तुलसी - मीरा आदि की पदकाव्य प्रेरणा और रवीन्द्र संगीत से उनकी प्रतिस्पर्धा भी काम कर रही थी । सम्भवत: उन्होंने रवीन्द्र - संगीत के समान निराला संगीत की भी कल्पना की हो ![१] ` गीतिका ` की रचनाएं धम्मार, झपताल, चौताल, तीन - ताल, दादरा आदि अनेक राग - रागिनियों में रची गयी है, जिनके उच्चारण में निराला ने कुछ अपनी स्वतंत्र वृत्ति का भी उपयोग किया है । उन्होंने ` गीतिका ` के गीतों के संबंध में लिखा है कि हिन्दी संगीत की शब्दावली और गाने का ढंग मुझे खटकते रहे । न तो प्राचीन ` ऐसो सीय रघुवीर भरोसो ` शब्दावली और गाने का ढंग दोनों मुझे खटकते रहे । न तो प्राचीन ` ऐसो सीय रघुवीर भरोसो ` की शब्दावली अच्छी लगती थी, यद्यपि इसमें भक्ति-भाव की कमी न थी, न उस समय की आधुनिक शब्दावली ` तोप तीरें सब धरी रह जायगी । मगर सुन `, यद्यपि इसमें वैराग्य की मात्रा यथेष्ट थी । हिन्दी गवैयों का सम पर आना मुझे ऐसा लगता था, जैसे मजदूर लकड़ी का बोझ मुकाम पर लाकर धम्म से फेंककर निश्चिंत हुआ । ----- प्राचीन गवैयों की शब्दावली संगीत की संगति रक्षा के लिए किसी तरह जोड़ दी जाती थी, इसलिए उसमें काव्य का एकान्त अभाव रहता था । मैंने अपनी शब्दावली को काव्य के स्वर से भी मुखर करने की कोशिश की है । ह्रस्व दीर्घ की घट ध- बढ़ के कारण पूर्ववर्ती

---

१ - काव्य का देवता : निराला : विश्वम्भर ` मानव `, पृष्ठ २०६ ।
१ अ काव्य का देवता : निराला : विश्वम्भर ` मानव `, पृष्ठ २१६ ।

गवैये शब्दकारों पर लांछन लगता है, उससे भी बचने का प्रयत्न किया है। दो एक स्थलों को छोड़कर अन्यत्र सभी जगह संगीत के छन्द शास्त्र की अनुवर्तिता की है। भाव प्राचीन होने पर भी प्रकाशन का नवीन ढंग लिए हुए हैं। साथ - साथ उसके व्यक्तिकरण में एक कला है - - - - जो संगीत कोमल, मधुर और उच्चभाव, तदनुकूल भाषा और प्रकाशन से व्यक्त होता है, उसके साफल्य की मैंने कोशिश की है। ताल प्राय: सभी प्रचलित हैं, प्राचीन ढंग रहने पर भी वे नवीन कंठ से नया रंग पैदा करेंगी।'[१]

निराला ने गीतों को प्रचलित तालों में भी आबद्ध किया है। वास्तव में यह कार्य संगीत - रचना का कठिन - कला के अन्तर्गत आता है। ये गीत, भैरव, केदार, मालकोस, कल्याण, भैरवा, झिंझोटी आदि किसी भी राग रागिनी में गाए जा सकते हैं। उनकी मुख्य ताले हैं :- धम्मार, रूपक, झपताल, त्रीताल, त्रिताल और दादरा आदि। नीचे कुछ तालों का उदाहरण निराला - काव्य से दिया जा रहा है :-

दादरा - यह ६ मात्राओं का एक ताल है, जिसके दो भाग होते हैं। पहली मात्रा पर ताली और चौथी मात्रा पर खाली होती है। सम पहली मात्रा पर होता है।

धा	गी	ना	धा	ती	ना
१	२	३	४	५	६
×			०		
स	खि	व	स		त
आ	S	S	या	S	S (गीतिका, गीत सं०३)

झपताल - यह १० मात्राओं की एक ताल है, जिसके ४ भाग होते हैं। पहली, तीसरी

---

१ - गीतिका : निराला : पृष्ठ ६।

और आठवीं मात्रा पर ताली और छठी मात्रा पर खाली होता है। पहली मात्रा पर सम होती है।

धी	ना	धी	धी	ना	ती	ना	धी	धी	ना
१	२	३	४	५.	६	७	८	६	१०
X					0				
अ	न	गि	न	त	आ	ऽ	ग	ये	ऽ
श	र	ण	में	ऽ	ज	तु	ज	न	नि

(गीतिका, गीत सं० १८)

इस प्रकार की रचना एक कुशल संगीतज्ञ ही कर सकता है। इनके अतिरिक्त निराला के कुछ छन्द लोक धनों पर भी आधारित है। `गीतिका` के ४१ वें गीत में होली का प्रयोग द्रष्टव्य है :-

नयनों के डोरे डाल गुलाल भरे, खेली होली
जागीरात सेज प्रिय संग रति - सनेह रंग घोली
दीपित दीप प्रकाश, कंज - छवि, मंजु मंजु, हंस बोली
मला मुख चुम्बन रोली। (गीतिका, पृष्ठ ४६)

नीचे की पंक्तियों में निराला की कजली धुन पर लिखी यह कविता द्रष्टव्य है :-

काले काले बादल छाये न आये बीर जवाहर लाल
पुरवई की हैं फटकारें, घन - घन को विष की बोछारें
हम हैं जैसे गुफा में समाए, न आए बीर जवाहर लाल। (बेला-गीत ४६)

यद्यपि `बेला` छायावादोत्तर रचना है, परन्तु यहां यह दिखाना इष्ट है कि निराला अपने काव्य - जीवन के प्रारम्भ से अंत तक विविध छन्दों के प्रयोग करते रहे।

६ - हिन्दीतर काव्य - परम्परा के छन्द :-

निराला जी बंगला, अंग्रेजी, फारसी के छन्दों से प्रभावित रहे हैं। निम्नांकित पंक्तियों में फारसी रुबाइयों की पद्धति द्रष्टव्य है :-

आह कितने विकल जन - मन मिल चुके
हिल चुके, कितने हृदय हैं खिल चुके
तप चुके वे प्रिय - व्यथा की आंच में ।
दु:ख उन अनुरागियों के झिल चुके । (परिमल, ` नयन ` पृष्ठ ५३)

` गीतिका ` के एक गीत में उर्दू के गजल छन्द का प्रयोग देखें :-

गई निशा वह, हंसी दिशाएं, खुले सरोरुह, जगे अचेतन
वही समीरण, जड़ा नयन मन, उड़ा तुम्हारा प्रकाश केतन
तमिल संदार, छिपे निशाचर, प्रभा भयंकर विनाश से दूर
विनिद्र खग - स्वर, मुखर दिगम्बर, बंधा दिवा के विकास के तन
अलक्ष्य को लक्ष्य कर सुखाधर रहे कमल दृग अभेद जलचर
निरुद्ध निज धर्म कर्म कर कर, विशुद्ध आभास, सिद्धि के घन ।

(गीतिका : गीत सं० ५६, पृष्ठ ६१)

निराला ने बंगला त्रिपदी और पयार छन्दों को हिन्दी में अपनाया है। ` अणिमा ` में अंग्रेजी के सानेट छन्द के अनुकरण पर अनेक चतुर्दशपदियां हैं।

निष्कर्ष :

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि निराला की छन्द दृष्टि वैसी ही वैविध्यपूर्ण, परिष्कृत एवं अत्यन्त प्रौढ़ है जैसी अलंकारादि अन्य क्षेत्रों में। उन्होंने परम्परागत छन्दों का प्रयोग तो किया ही, नवीन छन्दों का निर्माण भी किया है। इन नवीन छन्दों में उनका मुक्त छन्द एवं कजली, गजलें आदि लोक धुनों पर आश्रित नवीन छन्द आते हैं। अंग्रेजी भाषा के भी छन्द का सफल प्रयोग निराला ने किया है। परन्तु छायावादी काव्य को निराला ने मुक्त छन्द का एक विशिष्ट उपहार दिया है। वस्तुत: निराला का निरालापन हिन्दी काव्य में सर्वाधिक कहीं है तो वह छन्द-शिल्प के क्षेत्र में ही।

(४) निराला का गीत-शिल्प

छायावादी काव्य की अन्तर्मुखता की सर्वाधिक अभिव्यक्ति गीतों या प्रगीतों में हुई। ये गीत अपनी अन्तःप्रेरणा, संवेदनात्मकता, संगीतात्मकता और कलात्मकता सभी दृष्टियों से पूर्ववर्ती गीतों से सर्वथा भिन्न हैं। निराला ने भी गीतों की सृष्टि की है। उनके गीतों की अपनी विशिष्टताएं हैं जो उन्हें अन्य छायावादी कवियों से एकदम अलग कर देती हैं। प्रथमतः निराला के गीतों में वस्तुनिष्ठता और आत्मनिष्ठता दोनों का समन्वय है। छायावादी गीतों में जहां आत्मनिष्ठता एवं आत्माभिव्यक्ति की प्रचुरता है, वहीं निराला में वैसा नहीं है। निराला अन्तर्मुखी और बहिर्मुखी दोनों एक साथ हो हैं। `वह तोड़ती पत्थर`, भिक्षुक आदि गीतों में उनकी बहिर्मुखता है तो `सरोजस्मृति` गीत में उनकी आत्मनिष्ठता के साथ वस्तुव्यंजनात्मकता दोनों हासम्पृक्त भाव से व्यक्त हुए हैं। उनकी आत्माभिव्यंजना इन पंक्तियों में दर्शनीय है :-

`दुःख ही जीवन की कथा रही
क्या कहूं, नहीं जो कभी कही।`

परन्तु जब कवि काव्यकुन्जों पर बौछार करता है वहां वह अतिशय बहिर्मुखी भी हो उठता है:-

`ये कान्यकुब्ज-कुल-कुलांगार
खाकर पत्तल में करें छेद ----` आदि

द्वितीयतः निराला के गीतों में ओजस्वी लावण्य है। महादेवी के गीतों में करुणा-माधुर्य है, पंत के गीतों में सुकुमार लालित्य और निराला के गीतों में ओजस्वी लावण्य। एक बार निरालाजी ने पंतजी को लिखा कि हिन्दी में अपनी कल्पना शक्ति के लिए आप बेजोड़ समझ जाते हैं और अपनी अपराजिता भाषा के लिए, इसी मौलिक सागर का और हिन्दी के नवयुवकों के हृदय के नदीनद बहे हैं, वे आपसे कुछ हताश हो गए हैं, उन्हें इसी ओजस्विनी वाणी का कल्पनामृत पिलाइए।

यहां निराला ने ओजस्विता की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया है। ओजपूर्ण स्वर अवलोकन करें:-

`झूम झूम मृदु गरज-गरज घन घोर।
राग अमर। अम्बर में भर निज रोर।
झर झर झर निर्झर-गिरि-सर में
घर, मरुत-मर्मर, सागर में ---- (निराला ग्रन्थावली - १)

निराला के गीतों में वैविध्य है। यह विविधता उनके भाव, विषय, भाषा एवं कला आदि अनेक क्षेत्रों मे मिलती है। इनके गीतों में जिज्ञासा, भक्ति-भावना, देशभक्ति, आत्म-निवेदन, नैराश्य और अदम्य उत्साह सभी एक साथ देखे जाते हैं। `कौन तम के पार रे कह` में उनकी जिज्ञासा और आध्यात्मिकता है, `अगणित आगये शरण में जन, ननन` में भक्ति परकता, `एक बार बस और नाच तू श्यामा` में पौरुष का ओज और `मैं अकेला देखता हूँ` में नैराश्य की भावनाएं भरी हैं। इसी प्रकार निराला के गीतों प्रकृति, राष्ट्रीयता, प्रेम और सौन्दर्य आदि अनेक विषय हैं जहा प्रसाद के गीत सांस्कृतिकता से भरे हैं, महादेवी के गीतों रुक्तानता है, वहीं निराला में वैविध्य है। छायावादी गीतों की विविधता यदि कहीं है तो निराला में।

गीति काव्य मुख्यत: अनुभूतिप्रवण होता है। कवि की अन्तर्वेदना, उसकी टीस, तड़प और आनन्दविह्वलता गीतों के रूप में स्वत: प्रवाहित हो उठती हैं। निराला के गीतों में भी यही है। `गीतगुंज` में वे कहते हैं कि कवि के गीत उसके हृदय छन्द होते हैं :-

यदि मिला न तुमसे हृदय छन्द
तो एक गीत मत गाना तुम (गीत गुन्ज)

`राम की शक्ति पूजा` में उनका अपराजेय हृदय राम के करुणा-विगलित स्वरों में रो पड़ा है - `धिक् जीवन जो पाता ही आया है विरोध
धिक् साधन जिसके लिए सदा ही किया शोध।`

छायावादी गीतों की टीस यहां दर्शनीय है :-

प्राण-धन को स्मरण करते
नयन झरते, नयन झरते । (अपरा)

छायावादी कवियों का विलाप पूर्ण राग (मेलान्क्ली टोन) निराला की निम्नांकित कविता में है :-

मैं अकेला,
देखता हूं, आ रही
मेरे दिवस की सांध्य वेला । - (अपरा)

निराला के गीतों में अनुभूतियों की तीव्रता है, पर साथ-ही-साथ उनमें बौद्धिकता भी कम नहीं है । निराला में जो कुछ श्रेष्ठ है, उत्तम है, वह उनकी बौद्धिकता से प्रभावित है । निराला के गीतों में बौद्धिक चेतना और भावना का संतुलन सौन्दर्य और कला विधान के माध्यम से अभिव्यक्ति हुआ है । महादेवी के गीतों में यह सम्मिश्रण अपने दृश्य रूप में अभिव्यक्त हुआ है, किन्तु बौद्धिक चेतना अनुभूति के आश्रित है, उसका अंग और आधार है और निराला में दोनों का संतुलन है, यह दूसरी बात है कि कुछ गीतों में बौद्धिकता का प्रौढ़ और प्रबल आग्रह गीति-काव्य की आत्मा के विरुद्ध पड़ता है । निराला कीट्स की भांति 'सौन्दर्य सत्य है और सत्य सौन्दर्य' नहीं स्वीकार करते, किन्तु अनुभूति और विचार को सौन्दर्य की भूमिका में अभिव्यक्त करते हैं जिसमें सहज स्वच्छन्द प्रवाह है और स्वतन्त्र बौद्धिक चेतना से सजग एवं दृढ़ व्यक्तित्व की छाप जिसके नाद-सौन्दर्य और रूप चित्र पर है । इस रूप में निराला के गीत पूर्णतया मौलिक हैं ।' [१]

निराला के गीतों में संक्षिप्तता तथा अर्थगौरव का संश्लेषण भी मिलता है । उनके गीतों का अधिकांश वर्ण्य शाश्वत-प्रेम, सौन्दर्य और श्रृंगार है । इनमें गीतिका के गीत तो ऐसे हैं जिनमें लोक गीतों की प्रकृत-संवेदना और तीव्रता है । '(प्रिय) यामिनी जागी' श्रृंगार का एक निर्वैयक्तिक रूप प्रस्तुत करता है । इसमें सौन्दर्य की चेतना मन की

---

१ - निराला: सं० पद्मसिंह शर्मा : पृष्ठ ६२ पर डा० रालोचन पांडेय का लेख 'निराला के गीत' से ।

बाह्य और आभ्यान्तर सत्ता को ग्रहण करती है र फिर भी वासनात्मक नहीं है। प्रेम के श्रृंगार गीतों में 'मोन रही हार' भी एक प्रसिद्ध गीति है। इसमें अभिसारिका प्रिय के पथ पर जा रही है। वह सोचती है कि लोग इसे श्रृंगार क्यों कहते हैं १। इस गीत में आध्यात्मिकता का भी संस्पर्श है।

निराला के गीतों में लोक गीतों का रंग और आवेग भी मिलता है। 'नयनों के डोरे डाल गुलाल भरे खेली होली' में फाग का आनन्द मिलता है। यहाँ 'प्रिय-कर-कठिन-उरोज-परस-कस-कसक-मसक-गयी चोली' में जयदेव के 'गोपी-मीन-पयोधर-मदन-चंचलकर-सुगशाली' की छटा दर्शनीय है। विद्यापति की भांति निराला में असंयमित वासना नहीं है। विद्यापति की नायिका कामासक्त नायक की मधुर भर्त्सना करती है:-

'हे हरि! हे हरि! सुनिए सुवन भरि
अब न विलास क बेरा।'

यहाँ नैतिकता का आग्रह है परन्तु निराला में श्रृंगार की अभिव्यक्ति मात्र।

निराला के इन सौन्दर्य गीतों की तुलना जब हम रवीन्द्र नाथ के गीतों से करते हैं तब पाते हैं कि जहाँ रवि बाबू के गीतों में स्त्रैण-माधुर्य की कोमलता है, वहाँ निराला के गीतों में पुरुषोचित ओज। निराला के गीतों में पूर्ण अन्विति भी मिलती है। 'पंत में जहाँ इकाईपन, एकात्मकता का अभाव है, वहाँ निराला के गीतों का प्रभाव उसकी पूर्ण अन्विति के साथ है, निराला के गीतों की श्रृंगारिकता में 'झीनवसन मंह झलकत काया' की भांति दार्शनिकता और रहस्यमयता की अभिव्यंजना होती है। निराला के सौन्दर्य-गीतों की विशेषता अमूर्त को मूर्त आधार से अभिव्यक्त करने में ही नहीं, बल्कि, मूर्त से अमूर्त की व्यंजना में है।'[१]

निराला के गीतों में सर्वत्र रहस्यवाद की झलक मिलती है। 'परोक्ष की रहस्यपूर्ण अनुभूति से उनके गीत सज्जित हैं। रहस्य की कलात्मक अभिव्यक्ति की जो

---

१ - निरालाः सं० पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश': पृष्ठ ८६ : डा० रामखेलावन पांडेय का निबन्ध निराला के गीत।

बहुविध-चेष्टाएं आधुनिक हिन्दी में की गयी हैं, उनमें निराला की कृतियां विशेष उल्लेखनीय हैं। कुछ कवियों ने तो रहस्यपूर्ण कल्पनाएं ही की हैं, किन्तु निराला जी के काव्य का मेरुदन्ड ही रहस्यवाद है।[१] 'अस्ताचल रवि जल छल छल छवि' में रहस्यपूर्ण वातावरण की सृष्टि की गयी है। 'हुआ प्रात प्रियतम तुम जाओगे चले' में परकीया की उक्ति के द्वारा प्रेम-रहस्य ही प्रकट किया गया है। 'देकर अंतिम कर रवि गए अपर पार' में भी रहस्य दृष्टि है।

कला की दृष्टि से भी इन गीतों में लौकिक अवतारणा अलौकिक स्तर से ही हुई है। इससे सिद्ध होता है कि निराला जी के इन गीतों में भी रहस्यवाद की साहित्य-साधना का ही विकास हुआ है[२]। निराला के गीत भारतीय संगीत परम्परा पर निर्मित होते हुए भी पाश्चात्य कला परिपाटी, स्वर तथा संगीत से भी ओत-प्रोत हैं। निराला के गीतों में संगीत और काव्य का मधुर संनिवेश भी हुआ है :-

(१) 'बोले आम कि मोरे बोले
प्रात कि गात प्रात के तोते - (गति गुन्ज)

(२) घन आये, घनश्याम न आये
जल बरसे, आंसू दृग छाये। (गीतिगुन्ज)

वस्तुत: निराला के गीतों में संतुलित चिंतन, अनुभूति और कल्पना के साथ संगीत और सौन्दर्य का सहज सम्मिलन है जिसमें अतीत की अन्तश्चेतना, वर्तमान की जागरूकता, मानवता का संस्पर्श एवं आत्मा का उल्लास है। उनके गीत वैविध्यपूर्ण, रहस्यवादी, ओजोगुण मंडित, ज्योतिस्पर्श तरलायित एवं 'नवगति, नवलय, ताल-छन्द नव' पूर्ण है।

---

१ - गीतिका : समीक्षा : नन्द दुलारे वाजपेयी, पृष्ठ ६।
२ - गीतिका : समीक्षा : नन्द दुलारे वाजपेयी, पृष्ठ ७।

निराला के गीतों का वर्गीकरण

गीतों के वर्गीकरण का कोई निश्चित आधार न होने से विद्वानों ने विषय, शैली,, प और भाषा आदि को ही मुख्य आधार माना है। कतिपय लेखकों ने गीतियों का वर्गीकरण अन्तर ग अथवा वस्तुगत और वहिरंग अथवा आकारगत आधार पर किया है।[१] डा० गुलाब राय ने वर्ण्य के ही आधार पर उनका निरूपण और वर्गीकरण किया है।[२] इस प्रकार गीति काव्यों का कोई भी वर्गीकरण वैज्ञानिक और सर्वमान्य नहीं है। प्रत्येक वर्गीकरण में कुछ-न-कुछ दोष अवश्य हैं।

निराला का गीति काव्य तो अपने वैविध्य के लिए प्रसिद्ध है। अतः उसके वर्गीकरणा का सर्वमान्य एवं दोष रहित आधार ढूंढ निकालना कठिन है। हमारे विनम्र मत से निराला के गीति काव्य के दो वर्गीकरण हो सकते हैं :-

(क) वहिरंग या आकारगत और (ख) अंतरंग या वस्तुगत।

गीतिकाव्य के वहिरंग या आकारगत आधार पर निराला काव्य में निम्न प्रकार के गीतों की सृष्टि हुई है :-

(१) संबोधन गीति - (ओड) - जहां किसी प्रिय वस्तु या आदरणीय व्यक्ति के प्रति संबोधन करते हुए मनोवेग प्रगट किये जायं वहां संबोधन गीति होती है। निराला के ऐसे गीतों में 'यमुना के प्रति' अत्यन्त प्रसिद्ध है। इसमें कवि को यमुना के माध्यम से अपने स्वर्णिम अतीत को स्मरण किया है :-

यमुने तेरी इन लहरों में
किन अधरों की आकुल तान
पथिक प्रिया सी जगा रही है
उस अतीत के नीरव गान ?

---

१ - काव्य रूपों के मूल स्त्रोत और उनका विकास : डा० शकुन्तला दूबे : पृष्ठ ३५० ।
२ - काव्य के रूप : डा० गुलाब राय : पृष्ठ १२८ ।

इसी प्रकार ` तरंगों के प्रति `, ` खंडहर के प्रति `, ` प्रपात के प्रति `, ` भगवान बुद्ध के प्रति `, ` हिन्दी के सुमनों के प्रति ` आदि संबोधन गीतियां हैं ।

(२) शोक गीति (एलीजी) - ` सरोज स्मृति ` शोकगीत हिन्दी की सर्वाधिक प्रसिद्ध शोकगीति है । इतनी करुणा-व्यंजक, मार्मिक एवं व्यंग्यपूर्ण शोकगीति हिन्दी में अन्य कोई नहीं:-

जीवित-कविते, शत-शत-जर्जर
छोड़कर पिता को पृथ्वी पर
तू गई स्वर्ग, क्या यह विचार -
जब पिता करेंगे मार्ग पार
यह, अक्षम अति, तब मैं सक्षम
तारूंगी कर गह दुस्तर तम ? - (सरोज-स्मृति)

कवि को अपनी पोष-असमर्थता पर ग्लानि होती है :-

` धन्ये, मैं पिता निरर्थक था,
तेरे हित कुछ भी कर न सका । `

अंत में अत्यन्त हृदय-द्रावक शब्दों में कवि तर्पण करते हुए कहता है:-

कन्ये, गत कर्मों का अर्पण
कर, करता मैं तेरा तर्पण ।

यहां अंग्रेजी साहित्य के शोक गीतियों का अनुकरण नहीं है ।

(३) पत्रगीति (ए-पिस्-एल) - ` महाराज शिवाजी का पत्र ` जयसिंह के नाम से जिसे रूप में लिखा गया है उसमें पत्रगीति के समस्त गुण समाहित हैं । यहां जयसिंह जैसे एक देशवासी की नीचता दिखाकर अपने देश, जाति एवं धर्म रक्षार्थ हमें सन्नद्ध रहने का संदेश दिया गया है ।

(४) गीतिनाट्य (आपेरा) - ` पंचवटी-प्रसंग ` एक गीतिनाट्य है। पांच अध्यायों में समान होने वाली इस रचना को हम नाटक के पांच दृश्यों से युक्त मान सकते हैं। इसमें नाटक के अन्वितित्रय - देश, काल और स्थान- का अच्छा निर्वाह हुआ है। पात्रों के आगमन-प्रस्थान, स्वगतोक्तियों के न होने से इसे गीतिनाट्य कहना ही उचित है।

(५) आख्यानक गीति (बैलड) - निराला की दो रचनाएं ` राम की शक्ति पूजा ` और ` तुलसी दास ` इसके अन्तर्गत आती हैं। ` राम की शक्ति पूजा ` मुख्यत: बंगला की कृत्तिवास रामायण पर आधारित है। कृतिवास रामायण में जहां राम ने मूर्तिपूजा की है वहीं निराला ने यहां राम से यौगिक साधना करायी है। बस यही अन्तर है। यहां निराला का भाषा के कई स्वर हैं। भाषा में शास्त्रीय अथवा क्लैसिकल टच भी है। रचना में एक महाकाव्यात्मक उदात्तता है। इसके छन्द विधान की चर्चा पहले हो चुकी है।

` तुलसी दास ` में लोक-विश्रुत तुलसी विषयक विश्वास को ही आधार बनाया गया है। इसी लिये यह आख्यानक गीत है। इस कविता में आध्यान्तरिकता सर्वत्र व्याप्त है जो इसे गीति काव्य के अन्तर्गत ला देती है।

परन्तु निराला के गीतिकाव्य का यह वर्गीकरण उनकी कुछ विशिष्ट गीतियों को को नहीं समाविष्ट कर पाता। ऐसी दशा में हमें दूसरे अंतरंग अथवा वस्तुगत वर्गीकरण का सहारा लेना पड़ता है।

अंतरंग या वस्तुगत वर्गीकरण निम्न रूपों में अवलोकनीय है :-

१ - प्रेम प्रधान गीत - क - श्रृंगारिक गीत, जैसे - जुही की कली, मौन रही हार, नयनों के डोरे लाल गुलाल भरे, तुम छोड़ गये द्वार, लिखती, सब कहते आदि। ख - राष्ट्रीय या देश प्रेम सम्बन्धी गीत - जागो फिर एक बार, शिवाजी का पत्र आदि।

२ - भक्ति प्रधान गीत - ` अर्चना ` के गीत और अन्य प्रकीर्ण गीत ।
३ - विचार प्रधान गीत - जागरण, अधिवास, तुम और मैं, कवि, स्मृति चुम्बन और रेखा आदि ।

४ - बुद्धि प्रधान गीत - ` वन बेला, और कुकुरमुत्ता ` आदि ।
५ - प्रकृति गीत - संध्या सुन्दरी, जुही की कली, बादल राग, तरंगों के प्रति, और जलधि के प्रति आदि ।

६ - सामाजिक गीति - भिक्षु, वह तोड़ती पत्थर और विधवा ।

अत्यन्त संक्षेप में, निराला के गीतों का यही अंतरंग या वस्तुगत विभाजन हो सकता है ।

निष्कर्षतः हम कह सकते है कि समस्त छायावादी कवियों में गीति काव्य के क्षेत्र में भी निराला अत्यन्त विस्तृत हैं । उनके गीत केवल आत्मव्यन्जनात्मक, विषयीनिष्ट, अन्तर्मुखी ही नहीं, अपितु बहिर्मुखी भी हैं । किसी भी छायावादी कवि ने यह संश्लिष्टता नहीं है । उनके गीतों में काव्य और संगीत का मधुवेष्ठन, दार्शनिकता और अर्थगाम्भीर्य भी मिलते हैं । प्राचीन और अर्वाचीन, पाश्चात्य और भारतीय सभी प्रकार के गीति रूपों को समाहित करने वाला यदि कोई है तो निराला । इनके गीतों में ` शक्तिपूजा ` जैसे नवीन छन्द हैं तो ` तुलसी दास ` में एक लयपूर्ण ध्वनि का सृजन, जो उदात्त काव्य ` (ध्वनि काव्य) से भी आगे की उपलब्धि है ।

इस प्रकार गीति काव्य के क्षेत्र में निराला एक मौलिक एवं अप्रतिम रचनाकार हैं । गीतियों की नानात्मक संगीत स्वर संयुक्त सांन्दर्य संसृष्टि द्वारा वे युग-युग तक छाया वाद की ही नहीं वरन् हिन्दी गीति काव्य की श्रीवृद्धि करते रहेंगें ।

(घ) निराला की काव्य दृष्टि : एक निष्कर्ष

वस्तुत: देखा जाय तो निराला अन्तर्विरोधों के कवि हैं। उनकी कविता अपने विकास क्रम में विविध आयाम लेती है। उसमें कोई सम्यक् विकास-सूत्र ढूंढ निकालना असम्भव जान पड़ता है। यद्यपि कि कुछ विद्वानों (आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी प्रभृति) ने उनके काव्य विकास में व्याप्त उनकी अन्तर्दृष्टि को परखने की कोशिश की है। इनके काव्य के विविध धरातल हैं। `अनामिका`, `परिमल` और `गीतिका` में उनका एक रूप देखने को मिलता है जो उनके काव्य-विकास का प्रथम चरण (१९१६ से १९३६ के आस पास तक) है। इस काल में उनका स्वच्छन्द स्वरूप दृष्टिगोचर होता है। इस काल में छन्दों के बन्धन तोड़े गए और मुक्त छन्दों की रचना हुई। जहां कहीं भी छन्दोबद्ध रचनाएं हैं वहां भी निराला का शार्दूल-विक्रम ओज, उद्दाम-उत्साह एवं विद्रोही स्वभाव झलकता है। यहां निराला की विविधता है। `बादल राग` और `जागो फिर एक बार` में उनका क्रान्तिकारी और राष्ट्रवादी रूप, `तुम और मैं` में दार्शनिकता और `जुही की कली` में यौवन काल की उद्दाम भाव-प्रवणता व्यंजित है। `अनामिका` की `पंचवटी प्रसंग` नामिनी रचना अपने स्वरूप, कलात्मकता, चित्रात्मकता और दार्शनिक-समृद्धि की दृष्टि से एक अभिनव प्रयोग है। `गीतिका` (१९३६) में उनके गीत हैं जिनकी भावों की दृष्टि से अनेक कोटियां हैं - श्रृंगार परक, प्रार्थना परक, दार्शनिक, राष्ट्रप्रेम परक और स्फुट गीत। यहां सौन्दर्य समन्वित काव्य का संश्लिष्ट रूप दर्शनीय है। यहां वे विद्यापति, सूर और मीरा की श्रेणी में आ खड़े होते हैं। निराला में शास्त्रीय और स्वच्छन्द दोनोंप्रकार के संगीत यहां मिलते हैं। इनमें लोक गीतों या जन गीतों का माधुर्य और भाव द्रवण है।

इस प्रकार अपनी काव्य रचना के प्रारम्भिक दिनों में ही निराला वैविध्यपूर्ण दृष्टि लिये हमारे समक्ष आते हैं। उनकी विद्रोहात्मकता, उद्दाम पौरुष, दार्शनिकता, प्रकृति प्रेम, राष्ट्रीयता, अभिनव गीति दृष्टि और कलात्मकता सभी एक साथ दिखायी पड़ते हैं।

सन् १९३६ के बाद उनके काव्य विकास का दूसरा चरण (१९३७-१९४६ तक) प्रारम्भ होता है जिसमें 'कुकुरमुत्ता', 'बेला' और 'नये पत्ते' आदि की रचनायें हुई हैं। परन्तु इस प्रथम और द्वितीय चरण के बीच भी उन्होंने कुछ अत्यन्त महत्वपूर्ण रचनायें कीं जिनमें 'तुलसी दास', 'राम की शक्ति पूजा' एवं 'सरोज स्मृति' नामिनी कवितायें आती हैं। जहां 'सरोज स्मृति' में छायावादी आत्म व्यन्जना, भावात्मकता और नैराश्य है, वहीं 'राम की शक्ति पूजा' में क्लासिकल और रोमान्टिक टच। 'तुलसी दास' में छायावादी अन्तर्मुखीनता और स्थूल से सूक्ष्म की ओर प्रगति है। इस प्रकार इन दो काव्य चरणों के बीच भी उनकी विविधता हा मिलती है। १९३६ के बाद वे यथार्थवादी प्रगतिशील रचनाओं की ओर झुकते हैं। 'कुकुरमुत्ता' में उनका व्यंग्य है। 'नये पत्ते' में भी कवि की दृष्टि 'कुकुरमुत्ता' वाली ही है। 'नये पत्ते' की दृष्टि सामाजिक और वाह्योन्मुखी है जो 'विट' पर आधारित होकर व्यंग्य सृष्टि करती है। 'रानी और कानी' एक यथार्थवादी रचना है जिसमें समाज की उस मान्यता पर व्यंग्य है जो विवाह का आधार गुण नहीं, रूप सौन्दर्य को मानती है। 'खजोहरा' भी एक ऐसी ही रचना है।

अपने काव्य विकास के अंतिम चरणों (१९४७ से १९६१ तक) में वे नये आयाम लेते हैं। उनकी प्रवृत्ति भक्ति की ओर हो जाती है। 'अर्चना', 'आराधना' और 'गीत गुन्ज' का प्रणयन इसी काल में होता है। इस काल के दो प्रधान स्वर हैं:- प्रार्थना या भक्ति एवं संगीतात्मकता।

अत्यन्त संक्षेप में, निराला-काव्य के ये ही विविध सोपान हैं। प्रत्येक सोपान पर वे नये और मौलिक हैं। पहले छायावादी प्रवृत्तियों का प्राचुर्य, पुनः शास्त्रीयता और स्वच्छन्दता का संश्लिष्ट रूप, आगे यथार्थवाद और प्रगतिवाद जैसा रूप और अन्त में भक्ति परकता और गीतात्मकता -- यही उनकी काव्य प्रगति का एक संक्षिप्त इतिहास है। इन सभी में वे अपना वैविध्य और अभिनव प्रयोग लिए आते हैं।

अत: निराला जैसे अनेक दिशाओं और दिगन्त-भूमिकाओं के कवि को वाद की सीमा में बांधना और भी कठिन है, यद्यपि निराला छायावाद के प्रवर्तकों में परिगणित होते हैं। निराला के साथ छायावाद का सम्बन्ध ऐतिहासिक भूमिका पर बना था, परन्तु आरम्भ से ही उनकी स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियां उनको छायावाद की सीमित भूमि से बाहर खींच रही थीं। फिर भी निराला ने छायावाद के साथ अपने सम्बन्ध का निर्वाह कतिपय विभिन्नताओं - कहीं यथार्थ परकता एवं वहिर्मुखता, कहीं शास्त्रीयता और स्वच्छन्दता - के साथ आदि से अंत तक रक्खा। सन् १९३६ के पश्चात् उनमें छायावाद की स्वीकृत परिधियां खण्डित होने लगीं थी, फिर भी `तुलसी दास` और `राम की शक्ति पूजा` में छाया वाद के स्मृति चिन्ह विद्यमान है। व्यंग्यात्मक कविताओं के उन्मेष के पश्चात् कुछ लोग उन्हें प्रगतिवादी या प्रगतिशील मानने लगे और कुछ लोगों ने उसी प्रकार की रचनाओं में निराला के प्रयोग वाद की झलक देखी। ऐसे लोग यह नहीं जानते कि उनके काव्य में प्रगतिशील और प्रयोगशील तत्व तो आरम्भ से ही विद्यमान थे। १९५० के बाद की रचनाओं में वे अन्तर्मुखी हो जाते हैं और छायावाद के समीप आते प्रतीत होते हैं जबकि छाया वाद युग काफी पीछे छूट चुका था। अत: निराला को हम मूलत: छाया वादी माने तो कोई अत्युक्ति नहीं। उनके `कुकुर मुत्ता` में कुकुरमुत्ता का अहं छाया वादी `आत्म विस्तार` का परिचायक है और कुकुरमुत्ता साधारण निम्न वर्ग का प्रतीक जो छायावाद युगीन `सर्व साधारण की स्वीकृति` है। यह `सर्व साधारण की स्वीकृति` छायावादी कविता का एक प्रधान गुण है जो रोमाण्टिक कवि वर्ड्सवर्थ में भी मिलता है। उसने भी `लीच गेदरर` कविता लिखी और `सालिटरी रीपर` में फसल काटती हुई एवं गीत गाती हुई युवती का चित्रण किया है। ठीक इसी प्रकार निराला ने भी कुकुरमुत्ता` में भी समाज के साधारण वर्ग को लिया है। यदि अंग्रेजी साहित्य में वर्ड्सवर्थ रोमांटिक माना गया, प्रोग्रेसिव नहीं, तो यही बात निराला के लिए भी ठीक है। पुन: यदि निराला प्रोग्रेसिव हैं तो फिर वे कुकुरमुत्ता` में प्रगतिवादी साहित्य या

साहित्यकारों पर व्यंग्य क्यों करते हैं ? और यदि करते है तो यह आत्म उपहार के अतिरिक्त और कुछ नही है ।-

जैसे प्रोग्रेसिव की लेखनी लेते
नहीं रोका रुकता जोश का पारा
यहीं से सब हुआ
जैसे अम्मा से बूआ । (कुकुरमुत्ता)

इस सम्बन्ध में डा० दूधनाथ सिंह लिखते हैं : ' इस भ्रम से यह दूसरा भ्रम भी कई बार खड़ा किया गया है कि निराला की ' कुकुरमुत्ता ' की कवितायें प्रगतिशील आन्दोलन का उपज हैं । ' कुकुरमुत्ता ' की इससे बड़ी भ्रामक व्याख्या और कोई नही हो सकती । ---- वैसे ' कुकुरमुत्ता ' की वाह्य संरचना से यह भ्रम हो सकता है कि वह तथाकथित ' प्रगतिशील ' सिद्धान्तों से प्रभावित होकर रचा गया काव्य है । लेकिय सिर्फ वाह्य संरचना से ही, क्योंकि उसे गुलाब के प्रतिपदा में रखकर सोचा गया है और दूसरी ओर नव्वाब की लड़की और मालिन की लड़की - ' बहार ' और ' गोली ' - को एक दूसरे के आमने सामने रखा गया है । वाह्य संरचना की यह परिकल्पना सीधे पूर्जापति वनाम सर्वहारा के उस सिद्धान्त की याद दिलाती है, जो सारे प्रगतिशील काव्य सिद्धान्त का आधार है । लेकिन इतने से ही ' कुकुरमुत्ता ' को इन बने बनाए सांचों में डाल कर उसके अध्ययन से मुक्त हो जाना एक बहुत बड़ी बेईमानदारी है । क्योंकि इस तरह का प्रतिपदा तो निराला अपनी पहले की कविताओं में भी रखते रहे हैं :-

---- करती बार बार प्रहार
सामने तरु मालिका, अट्टालिका प्राकार । [१]

इस तरह निराला के काव्य व्यक्तित्व के जिस रचना स्तर का प्रारम्भ विधवा, दीन, तोड़ती पत्थर या भिक्षुक में हुआ, उसका चरम विकास ' कुकुरमुत्ता ' में मिलता है ।[२]

१-२ : ' कुकरमुत्ता ' : काव्य-आभिजात्य से मुक्ति: डा० दूधनाथ सिंह, पृ०२५ व १७

अत: प्रगतिवादियों के मान्य अर्थ में नववह प्रगतिशील थे, न समाज वादी या मार्क्सवादी ही। ---- चूंकि प्रगतिवाद के चरण उसी के आलोचकों के संकीर्ण दृष्टिकोण के कारण डगमगाने लगे थे, उन्होंने गिरने से बचने के लिए उस समय निराला की बांह पकड़ी ---- जिस प्रकार अब उनकी मृत्यु के पश्चात् अपने पक्ष को बल देने के लिए प्रयोगवादी और नयी कवितावादी उन्हें अपनी नवीनतम प्रेरणा के गोमुख के रूप में प्रचारित करने लगे हैं - जैसा कि विगत् वर्ष इसी व्याख्यानमाला के अन्तर्गत् अज्ञेय जी ने भी अपने व्याख्यान में स्वीकार किया था - वे अब निराला के व्यक्तित्व की विराट नींव पर मिट्टी के घरोंदे तथा झाड़-फूस के छप्पर उठाने का प्रयास कर रहे हैं।' १

तात्पर्य यह कि वे न तो प्रगतिवादियों के मान्य अर्थ में प्रगतिवादी थे और न तो प्रयोगवादियों के मान्य अर्थ में प्रयोगवादी। वस्तुत: वे छायावादी थे और उनकी स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति उन्हें छायावाद के सीमित क्षेत्र से बार बार बाहर खींच रही थी। यही कारण है कि निराला में विविधता है और वे आजतक विवादग्रस्त रहे हैं।

अब प्रश्न उठता है कि क्या उनकी इन विविधताओं के बीच अनुस्यूत उनकी कोई अपनी काव्य दृष्टि रही है जो उनके काव्य में आदि से अन्त तक व्याप्त है। जब हम इस प्रश्न का समाधान ढूंढते हैं तो पाते हैं कि उनकी इस विविधता में एकता का एक सूत्र विद्यमान है और वह है उनकी प्रकृत काव्य दृष्टि जिसका उल्लेख उन्होंने बार बार अपने ग्रन्थों में किया है। कहीं कहीं 'प्रकृत' के लिए सहज, अकृत्रिम और स्वाभाविक प्रवृति शब्दों का भी प्रयोग करके उन्होंने इसी काव्यदृष्टि की ओर संकेत किया है :-

१ - सहज भाषा में समझाती थी उच्च तत्व (जागरण)

२ - सजा सहज सितार (तोड़ती पत्थर)

---

१ - निराला: सं० पद्म सिंह शर्मा 'कमलेश', पृष्ठ ३० पर आचार्य जानकी बल्लभ शास्त्री का लेख।

३ - परसे ज्यों प्राण
    पन्द्र पड़ा सहज गान   (सुन्दर हे, सुन्दर: अपरा)

४ - मुक्त छन्द
    सहज प्रकाशन वह मन का
    निज भावों का प्रकट अकृत्रिम चित्र   (जागरण)

५ - कवि का बढ़ जाता अनुराग
    विरहाकुल कमनीय कंठ से
    आप निकल पड़ता तब एक विहाग   (संध्या सुन्दरी)

निराला विषयक पिछले विवेचनों से स्पष्ट है कि उन्होंने काव्य के सैद्धान्तिक और व्यावहारिक दोनों पक्षों में इसी दृष्टि का उपयोग किया है। कविता की परिभाषा करते हुए उन्होंने उसे कवि के हृदय-निर्गत स्वाभाविक उद्गार कहा। विषय के क्षेत्र में तो वे स्वतन्त्रता या स्वच्छन्दतावादी हैं ही। जब कभी भी उनके सामने जो भी विषय आया, उनका भावाकुल हृदय जिस किसी भी विषय पर उमड़ पड़ा, उन्होंने अपनी लेखनी उठा ली। यही कारण है कि उनमें वैविध्य है और अन्य छायावादी कवियों की बंधी-बंधायी लीक पर वे नहीं चलते। महादेवी का एक ही पथ रहा है, प्रसाद जी भी वैसे ही रहे और पंत जी ने भी कई मार्ग बदले परन्तु उनके भी मार्ग गिने गिनाए हैं। इनके विपरीत निराला में विविधता है और वे हर क्षण नवीन हैं। उनकी भाषा और छन्द भावानुसार आए हैं। `अलंकारलेश-रहित` की बात करते हुए भी उन्होंनें अलंकारों का प्रयोग स्वाभाविक और प्रकृत रूप में किया है।` निराला काव्य की प्रकृत भूमियों का प्रतिस्थापन लेकर चले।`[१] अत: उनकी काव्य दृष्टि प्रकृत है।

निराला की इस प्रकृत दृष्टि से उद्भूत हुई नित-नवीनता। निराला काव्य `क्षणे-क्षणे यन्नवतामुपैति` का परिपोषक है। निराला जी ने कहा था - `हवा रोज ताज़ी चलती है, आसमान हर वक्त नए रंग बदलता है, फिर भी लोग संस्कारों के अनुसार की हुई- सोची हुई बातें ही लिखते, चली हुई राहें ही चलते हैं।`[२]

१ - निराला काव्य: पुनर्मूल्यांकन: डा० धनन्जय वर्मा : पृष्ठ ६५, प्रथम संस्करण।
२ - प्रबन्ध पद्म : पृष्ठ १७२।

तात्पर्य यह कि वे `नूतनंपदे पदे` चाहते थे -

नवगति, नवलय, तालछन्द नव
नवल कन्ठ, नव जलद मन्द्र रव
नव नभ के नव विहग बृन्द को
नव स्वर, नव पर दे ।   (गीतिका)

एक स्थल पर वे कहते भी हैं कि मैंने जो कुछ भी लिखा, सदैव नूतनता के दृष्टिकोण से
लिखा ।[१] निराला काव्य आरम्भ से अन्त तक नवीन रहा है । एक क्षण जो
नवीन है दूसरे क्षण वही प्राचीन हो जाता है । निराला काव्य की यह नव चेतना
उन्हें किसी `बियान्ड` की ओर ले जा रही है । यहां का प्रत्येक नवीन शीघ्र ही
अतिक्रमित हो जाता है और निराला अपने व्यतीत, अतीत से ही विद्रोह कर
बैठते हैं । प्रसाद की दृष्टि अतीत की संस्कृति पर ही लगी है, पंत की दृष्टि कुछ
निश्चित ढरों पर ही नए आयाम लेती है और महादेवी का तो एक ही पथ है
प्रिय-मिलन का, परन्तु निराला में नित्य नवीन पथ की अनुवर्तना । पंत के `पल्लव`
में आदि से अन्त तक एक ही स्वर है प्रकृति का परन्तु निराला केवल `परिमल` में
एक साथ ही अनेक विषयों का प्रतिपादन करते हैं । नवीन वर्ण्य के अतिरिक्त उनकी
नवीन शिल्प दृष्टि भी इसी बात को सिद्ध करती है कि वे नवीनता वादी थे ।

निराला की इस नवीनतावादी दृष्टि ने उन्हें विद्रोही बना दिया ।
वे किसी बन्धन को नहीं स्वीकार करते और साहित्य में नियम-राहित्य की बातें
करते हैं । विद्रोह की यह भावना हिन्दी में निराला में सर्वाधिक है । पंत जी ने भी
विद्रोह किया है किन्तु उनकी विद्रोह दृष्टि उतनी व्यापक नहीं है जितनी निराला
की । निराला की इस विद्रोह दृष्टि पर अंग्रेज कवि शेली का प्रभाव था । निराला
ने शेली के काव्य को आत्मसात् कर लिया था । उन्होंने बायरन को भी पढ़ा था ।
शेली ने अपने युग की जड़ीभूत मान्यताओं को देखा था, अपने व्यक्तिक जीवन में

---

१ - महाकवि निराला : संस्मरण: श्रद्धांजलियां : पृष्ठ ४२ ।

घटनाओं की मार को सहा था और बस एकबारगी विद्रोही बन बैठा था । ठीक यही बात निराला की है । उन्होंने भी अपने वैयक्तिक जीवन में अनेक उतार चढ़ाव देखें, अत्याचार - अन्याय और उत्पीड़न - प्रपीड़न देखे । धीरे - धीरे उनमें सड़ी गली सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक और साहित्यिक मान्यताओं के प्रति विद्रोह का सृजन होता रहा । अंततोगत्वा उनका यह विद्रोही स्वर अत्यन्त मुखर हो उठा ।

शेली की ' ओड टू दी वेस्ट विन्ड ' और निराला की ' बादल राग ' कविताओं में विद्रोह की अनुगूंज सुनाई पड़ती है । शेली ने वेस्ट विंड को विध्वंसक और निर्माता के रूप में प्रस्तुत किया है ।[१] निराला ने भी बादल के विनाश और निर्माण दोनों पक्षों का संकेत किया है :-

बार - बार गर्जन
वर्षण है मूसलधार
हृदय थाम लेता संसार
सुन - सुन घोर वज्र - हुंकार ।
अशनिपात से शायित उन्नत शत-शत वीर,
क्षत - विक्षत-हत अचल शरीर
गगनस्पर्शी स्पर्धाधीर । ' (निराला ग्रन्थावली -१)

बादल का निर्माण कारक रूप -

' हंसते हैं छोटे पौधे लघु भार
शस्य अपार
हिल - हिल
खिल - खिल
हाथ हिलाते
तुझे बुलाते
विप्लव ब से छोटे ही हैं शोभा पाते ।' (निराला ग्रन्थावली -१)

---

१ - Wild spirit which are moving everywhere
Destroyer and preserver, hear, Oh, hear ;
Shelley: Ode to the West Wind.

स्वतंत्रता की भावना भी निराला और शेली दोनों में समान है । दोनों ने मुक्ति - हेतु बंधन काट डालने की बातें कहीं है । शेली ने ` मास्क आफ एनार्की ` में विद्रोह की प्रेरणा दी है ।[१]

निराला की ` मुक्ति ` नाम्नी कविता में उनकी यही विद्रोही भावना अभिव्यक्त हुई है :-

` तोड़ो, तोड़ो, तोड़ो कारा
पत्थर की, निकले फिर
गंगा जल धारा । (अनामिका, पृष्ठ १३७)

उनकी कविता में सर्वत्र विद्रोह और पौरुष का ओजस्वी स्वर मुखर है । स्वयं निराला ने ` सरोज - स्मृति ` में अपनी इस दृष्टि को स्वीकार किया है :-

` ----- गो नहीं भीति
कुछ मुझे तोड़ते गत विचार
पर पूर्वरूप प्राचीन भार
ढोते मैं हूं अक्षम, ` (सरोज - स्मृति : अपरा)

वे पंत जी के ` द्रुत झरो जगत के जीर्ण पत्र ` के समान ही प्राचीन का विनाश चाहते हैं । निराला के विद्रोह में ओज, पौरुष और उद्दाम का असीम विलास है । अन्य छायावादी कवियों और निराला में यहीं अन्तर हो जाता है । पंत में स्त्रैण-माधुर्य का और निराला में पौरुष - पारुष्य का प्राधान्य है । महादेवी करुणा-कलित और प्रसाद मधुचर्या मिश्रित हैं । निराला में उद्दाम वेग और क्रान्ति के स्वर हैं ।

---

१ -
Rise, like lion after slumber,
In unvanquishable numbers,
Shake your chains to earth like dew
Which in sleep had fallen on you
You are many, they are some.
(Shelley and His Poetry: E.W. Edmunds), p.104.)

शेली के ' ओड् टू दी वेस्ट विण्ड ' को पढ़ने से जैसे तन - मन में आग सी लग जाती है वैसे ही निराला के ' बादल राग ' को ।

निराला की यह विद्रोह - दृष्टि साहित्य के समस्त अंगों पर पड़ी है । उन्होंने वर्ण्य - विषय में मूल परिवर्तन किया । रीतिकालीन ' दीपशिखा सी देह ' के स्थान पर ' श्याम तन, भर बंधा यौवन, नत नयन - प्रिय - कर्म रत मन ' एवं ' पेट पीठ दोनों मिलकर हैं एक ' की सृष्टि से लेकर उपेक्षित ' कुकुरमुत्ता ' तक की रचना कर साधारण से साधारण विषयों की ओर मोड़ा और साहित्यिक - क्रान्ति का बीज वपन किया। भाषा, भाव, शैली और छन्दों सभी में उन्होंने आत्यन्तिक विद्रोह किया । जीवन और काव्य दोनों में उनका विद्रोह समगति का है ।

विद्रोह तो अंग्रेजी साहित्य में रोमांटिक कवि वर्ड्सवर्थ ने भी किया था परन्तु निराला उससे कहीं आगे थे । वर्ड्सवर्थ में विद्रोह और स्वातंत्र्य की निष्ठा अवश्य थी परन्तु उनमें वह उद्दाम - प्रवेग और पौरुष - काठिन्य नहीं जो निराला में है । वे शेली के सदृश हैं। निराला में वर्ड्सवर्थ की विद्रोह दृष्टि, शेली का मुक्तिकामी उद्दाम - प्रवेग, कालरिज की दार्शनिकता और बायरन का बेरोनिज़्म सभी एक साथ मिलते हैं । निराला के विद्रोह में इन सबका समवाय है । अतः वे इन सबके समान होते हुए भी इनसे सर्वथा भिन्न हैं ।

' निराला के काव्य में इतना विद्रोह और ललकार होने पर भी उच्छृंखल और निर्मर्याद वाचलता नहीं आने पायी है । इसका कारण है कि निराला जी को अपना लक्ष्य मालूम है ।'[१] निराला में जो क्रान्ति का स्वर है, वह रवीन्द्र में नहीं है । ' जागो फिर एक बार ' और ' बादल राग ' हिन्दी में निराला की अपनी चीजें हैं ।

निराला की इस विद्रोह दृष्टि के फलस्वरूप उनका काव्य मुक्तकाव्य की श्रेणी में आ खड़ा होता है । निराला मानते हैं कि ' मनुष्यों की मुक्ति की तरह कविता की

---

१ - महाकवि निराला : सं जानकी वल्लभ शास्त्री, पृष्ठ ३७ पर डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी के ' निराला जी ' शीर्षक लेख से ।

भी मुक्ति होती है।'[१] 'परिमल' की भूमिका में वे लिखते हैं कि 'मनुष्यों की मुक्ति कर्मों के बन्धन से छुटकारा पाना है और कविता की मुक्ति छन्दों के शासन से अलग हो जाना। जिस तरह मुक्त मनुष्य कभी किसी तरह भी दूसरे के प्रतिकूल आचरण नहीं करता, उसके तमाम कार्य औरों को प्रसन्न करने के लिए होते हैं - फिर भी स्वतंत्र। इसी तरह कविता का भी हाल है। मुक्त काव्य कभी साहित्य के लिए अनर्थकारी नहीं होता है, प्रत्युत उससे साहित्य में उस प्रकार की स्वाधीन चेतना फैलती है जो साहित्य के कल्याण की ही मूल होती है।'[२] निराला साहित्य में इसी स्वाधीन चेतना का आवाहन करते हैं जो उनकी मुक्त दृष्टि का परिचायक है। 'तुलसीदास' में तुलसी के प्रति कहे गये ये शब्द समस्त कविवृन्द को मुक्ति का परिचय देते हैं :-

'वह उस शाखा का वन - विहंग
उड़ गया मुक्त नभ निस्तरंग
छोड़ता रंग - रंग पर जीवन।' (तुलसीदास : अपरा)

यही कारण है कि वे 'मुक्त' या 'मुक्ति' शब्द का बार - बार प्रयोग करते हैं :-

आज हो गये ढीले सारे बंधन
मुक्त हो गये प्राण --------।

मेरे गीत और कला में वे कहते हैं कि 'भावों की मुक्ति छन्द की मुक्ति चाहती है। यहां भाषा, भाव और छन्द तीनों मुक्त है।'[३] एक स्थल पर वे कहते हैं - 'हिन्दी काव्य की मुक्ति के मुझे दो उपाय मालूम दिये, एक वर्णवृत में दूसरा मात्रावृत्त में।'[४] स्पष्ट है निराला काव्य की मुक्ति के पुरोधा थे। यही कारण है कि उन्होंने साहित्य

---

१ - परिमल : भूमिका : पृष्ठ १२।
२ - परिमल : भूमिका : पृष्ठ १६।
३ - प्रबंध प्रतिमा : पृष्ठ २७०।
४ - प्रबंध प्रतिमा : पृष्ठ २६६।

साहित्य को विराट बनाने की सतत चेष्टा की है । ' काव्य में साहित्य के हृदय को दिगन्त व्याप्त करने के लिए विराट रूपों की प्रतिष्ठा करना अत्यन्त आवश्यक है ।'[१] ' जुही की कली ' भी इसी को उदाहृत करने के लिए रची गयी है । उसमें आत्मा की मुक्तावस्था का चित्र देखते ही बनता है । स्वयं निराला के शब्दों में - ' कला की सुप्ति - आत्म - विस्मृति - मन के अन्धकार के बाद है जागरण - आत्म परिचय - प्रिय साक्षात्कार - मन का प्रकाश - खिलना । कली सोते से जगी हुई, प्रिय से मिली हुई, खिली हुई, पूर्ण मुक्ति के रूप में, सर्वोच्च दार्शनिक व्याख्या सी सामने आती है या नहीं, देखें ।'[२] निराला का यह मुक्तिवादी संदेश उनकी अद्वैत दृष्टि का परिणाम है । व्यक्ति या जीव पूर्णमुक्त ब्रह्म का ही एक अंश है जो माया के बंधनों में पड़ा द्वैत की अनुभूति करता है। निराला जी इसी से मुक्त हो अपने मुक्त स्वरूप को पहचानने का संदेश हमें देते हैं :-

मुक्त हो सदा ही तुम,
बाधा - विहीन - बंध छन्द ज्यों
डूबे आनन्द में सच्चिदानन्द रूप ।

' बादल राग ' में बादल इसी मुक्ति का प्रतीक होकर आया है । उसके लिए उन्होंने बार - बार निर्बन्ध, स्वच्छन्द, उद्दाम आदि शब्दों का प्रयोग किया है । वे बादल के समान ही मुक्त, अव्याहत, उद्दाम, स्वच्छन्द एवं विराट साहित्य का सृजन करना चाहते हैं । अतः उनका समस्त साहित्य मुक्तिवादी हो गया है ।

भाव, विषय और भाषा के अतिरिक्त उनकी मुक्त दृष्टि शैली और छन्दों के क्षेत्र में हमारे समक्ष आती है । निराला छन्द मुक्ति के पुरोधा हैं । उन्हें ' छन्दों गुरु ' कहा गया है । छन्दोमुक्ति का अर्थ अराजकता नहीं होता, उसकी भी अपनी व्यवस्था है । मुक्त छन्द का तात्पर्य छन्द - शास्त्रीय रूढ़ि और परम्परागत छन्दसिक

---

१ - प्रबन्ध पद्म : पृष्ठ १६८ ।
२ - प्रबन्ध प्रतिमा : पृष्ठ २६० ।

नियमावली से स्वतंत्रता ही है । निराला की मुक्त छन्द साधना का निर्देश केवल इतना ही है कि कविता को छन्द के बंधन से मुक्त किया जाय, क्योंकि परम्परागत नियमावली में एक रूढ़ि आ गयी थी और उनमें नवीनता की साधना नहीं हो सकती थी । यहां एक - मौलिक प्रश्न उपस्थित होता है कि जब मुक्त छन्द की व्यवस्था में भी नियम है, तो प्राचीन छन्द परम्परा के विद्रोह का क्या अर्थ है ? इसका उत्तर आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी देते हैं :-

" पुरानी कोठियों और महलों से जो दूर वातावरण में बने थे, बाहर निकल आना भी कभी क्रान्ति कहला सकती है और नये आवास बनाकर रहना भी नये वातावरण का निर्माण करना कहा जा सकता है । ठीक यही बात निराला जी के छन्द और उनकी छन्दात्मक रचनाओं के संबंध में कही जा सकती है ।"[१] इस मुक्त छन्द के संबंध में निराला का कथन है कि उससे साहित्य में एक प्रकार की स्वाधीन चेतना जागृत होती है जो साहित्य में कल्याण का मूल है ।[२]

कुल मिलाकर, हम कह सकते हैं कि निराला जी भाव, भाषा, शैली और छन्द सभी क्षेत्रों में चतुर्दिक मुक्त दृष्टि रखते हैं । ऐसी मुक्त दृष्टि पहले किसी युग में नहीं थी -

" वहां नहीं था कहीं आज का मुक्त प्राण यह ।" (अपरा:पृष्ठ १६१)

महाप्राण निराला के इस मुक्तिवादी दृष्टिकोण ने उनके काव्य में वैविध्य और व्यापकता को जन्म दिया । उनका काव्य युग के समस्त मूल्यों को प्रस्तुत करता है । मुक्ति के साथ विस्तार और व्यापकता का यह आख्यान अप्रतिम है । काव्य की इस व्यापकता के दो रूप होते हैं - एक आरोपित या सायास होती है, दूसरी स्वत: प्रेरित, एक प्रयत्नजन्य है तो दूसरी स्वाभाविक । निराला की काव्य

---

१ - आधुनिक साहित्य : आ० नन्द दुलारे वाजपेयी, पृष्ठ २६ ।
२ - परिमल : भूमिका, पृष्ठ १२ ।

व्यापकता द्वितीय श्रेणी की है। श्री मैथिलीशरण गुप्त के काव्य में भी व्यापकता है और उसका आकार वृहद् है, परन्तु उसमें व्याप्त उनका व्यक्तित्व सर्वत्र एक सा है। निराला जी सुग - विस्तृत हैं। उनका यह विस्तार और व्यापकता उनकी मुक्तिवादी दृष्टि की ही देन है। इस प्रकार निराला साहित्य के क्षेत्र में उस विराट् के उपासक हो जाते हैं जिसका चित्र खींचने के प्रति हिन्दी के नवीन पद्य साहित्य में कवियों का उतना ह ध्यान ही नहीं गया।[१]

विराट साहित्य की इस रूप कल्पना ने निराला को अन्तर्विरोधों का कवि बना दिया। उनमें ऐसे - ऐसे विषय मिलते हैं जिनमें दो ध्रुवों की दूरी स्पष्ट परिलक्षित होती है। उनमें एक साथ ही भावात्मकता और बौद्धिकता, दार्शनिकता और स्थूलता एवं शास्त्रीयता और स्वच्छन्दता मिलते हैं। अतः निराला की काव्य दृष्टि द्विविध मार करती है। एक तरफ तो वह शास्त्रीयता के समस्त सम्भार से युक्त है तो दूसरी ओर वह स्वच्छन्दता का भी आवाहन करती है। 'सरोज - स्मृति' में तो वह एक तरफ प्राचीन रूढ़ियों और मान्यताओं के प्रति मोह से ग्रसित दिखाई पड़ती है तो दूसरी ओर उन्हें तोड़ फेंकने में भी भय नहीं खाती। वे लिखते हैं -

'फिर सोचा - मेरे पूर्वजगण
गुजरे जिस राह वही शोभन
होगा मुझको, यह लोक-रीति
कर दें पूरी, गो नहीं भीति
कुछ मुझे तोड़ते गत विचार
पर पूर्ण रूप प्राचीन भार
ढोते मैं हूं अक्षम।

(सरोज-स्मृति: अपरा)

---

१ - प्रबन्ध पद्म : पृष्ठ १६६।

प्रस्तुत कविता की अंतिम दो पंक्तियों से ध्वनित है कि वे ` प्राचीन भार ` ढोते हैं, वे शास्त्रीयता का भार वहन करते हैं, पर पूर्ण रूप से नहीं । इसलिए प्राचीन को मानते हुए भी वे नवीन हैं, शास्त्रीय होते हुए भी वे स्वच्छन्द हैं । इसका विवेचन पिछले पृष्ठों में हो चुका है । शास्त्रीयता और रोमांटिकता दोनों का सम्मिलन उनकी कविताओं में है । उदाहरण स्वरूप हम ` राम की शक्ति पूजा ` को लेते हैं । ` शक्ति - पूजा ` की कथा कथानक धर्मा होकर भी क्लासिकल बन्धन में नहीं जकड़ती, प्रत्युत यह रोमांटिक रूप में क्लासिकल भव्यता को धारण करने का जबर्दस्त प्रमाण होती है । रोमांटिक रूप के विन्यास के कारण इसमें एक ओर कवि की आत्मा की कथा प्रक्षेपित हुई है, दूसरी ओर मिथक में समसामयिक चेतना गुंथ गयी है, और तीसरी ओर दिवास्वप्नों, फान्तासियों, विवरणों, संवादों के सिद्धहस्त तकनीकों का इस्तेमाल हुआ है । ---- इसके विलक्षण रूप की ही यह खूबी है कि इसके लगभग हर एक खण्ड में कला का नया प्रयोग है । पहला खंड दिन में घटी घटनाओं से गुंफित है और हिन्दी में संस्कृत शब्दावली की ध्वनि - सौन्दर्य को धारण करने की कुशलता का अद्भुत प्रमाण है । यमक की झमक से गमकते हुए चरण श्री हर्ष के प्रभाव की याद दिलाते हैं जहां कला का परिपाक बौद्धिक चिन्तन से होता है । इसी खंड में लौटती हुई वानर सेना मारवि के, जैसे अर्थ गौरव से गर्भित है । दूसरे खण्ड में लंका में बिताई गयी रात के कालिदासीय भावोन्मद दिवास्वप्न चित्र हैं । तीसरा खंड हनुमान की अतिमानवीय (सुपर ह्यूमन) शक्ति तथा अतिप्राकृतिक (सुपरनेचुरल) कार्यों से जुड़ा है और तुलसीदासीय कौशल से व्यंजित है । चौथे खण्ड में विभीषण तथा जाम्बवान की आत्मीय सलाहें हैं जिनमें छायावादी वैयक्तिकता की भी झांकी है । और अन्ततः पांचवें खण्ड में राम द्वारा शक्ति की सांस्कृतिक कल्पना एवं तांत्रिक - साधना का अंकन है । इस तरह सम्पूर्ण कविता की भाषा की अभिव्यंजनाओं में अकादमीय परम्परा का एक अभ्यासी इतिहास मिलता है जो कवि निराला के अनुशीलन का भी सबूत है ।[१]

---

१ - निराला : सं० पद्मा सिंह शर्मा ` कमलेश ` में ` राम शक्ति पूजा ` लेख से, लेखक रमेश कुन्तल मेघ, पृष्ठ २५१ ।

इस प्रकार 'निराला जी की कला में रोमांटिक के अतिरिक्त एक क्लासिकल स्पर्श भी मिलता है ---- उनका जो कुछ सर्वोत्कृष्ट है वह क्लासिकल रुचि से प्रेरित है।'[१] अतः निराला की काव्य दृष्टि अन्तर्विरोधों से युक्त है जो उनकी सर्वथा मुक्त दृष्टि की देन है।

निष्कर्षतः निराला की काव्य दृष्टि प्रकृत है जो उनके सैद्धान्तिक और व्यावहारिक दोनों विवेचनों से स्पष्ट है। इसे ही हम 'स्वच्छन्द दृष्टि' भी कह सकते हैं। इस प्रकृत दृष्टि से नूतनता का समागम हुआ और नूतनता हेतु विद्रोह या क्रान्तिदर्शी रूप और फलस्वरूप मुक्तिवादी दृष्टि। मुक्तिवादिता से प्रसूत हुई विविधता और व्यापकता जिसमें अन्तर्विरोधों की संसृष्टि हुई। इस प्रकार निराला की काव्य दृष्टि प्रकृत है जो किसी भी बंधन को नहीं स्वीकार करती। वे सर्वथा निर्बंध, स्वच्छन्द और प्रकृतवादी हैं।[२]

---

१ - निराला : सं० पद्मा सिंह शर्मा 'कमलेश', पृष्ठ २८, आ० जानकी वल्लभ शास्त्री के लेख, 'निराला, शक्ति, सौन्दर्य और ज्योति : स्पर्श के कवि' से।

२ - निराला काव्य : पुनर्मूल्यांकन : डा० धनंजय वर्मा, पृष्ठ ६५।

--:00:--